जनवरी
2026

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 90 | अंक– 1 | प्रति – ₹ 25 | ₹ 300 वार्षिक

परम वन्दनीया माता भगवती देवी शर्मा
जन्म शताब्दी
1926 2026

अखण्ड दीप शताब्दी वर्ष
1926 2026
शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार

17 ▶ हिम्मत और हौसले से सब कुछ संभव है
28 ▶ सात्त्विक आहार-विहार अपनाएँ
49 ▶ नैतिक बल—वैयक्तिक एवं सामाजिक प्रगति का ठोस आधार
58 ▶ कर्मों के अधीन है जीवन

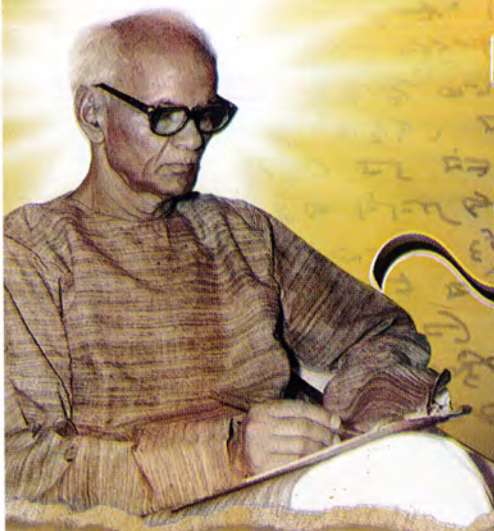

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

कर्मयोगी की मानसिक स्थिति

निस्पृह होकर अनासक्त मन से संसार के कल्याण के लिए कर्म करते रहना कर्मयोगी का लक्षण है। ऐसे कर्मयोगी दो प्रकार के होते हैं। एक तो वे जो गृही होकर कर्मयोग की साधना करते हैं। घर में रहो,चाहे घर छोड़ दो, संसार के कल्याण के लिए कर्म अवश्य करते रहना चाहिए। भगवान के लिए कर्म,लोक-कल्याण के लिए कर्म—यह ध्येय रखना और इस पर चलना कर्मयोगी का यही साधन है।

गृही और गृहत्यागी कर्मयोगी के दो रूप होते हुए भी दोनों में कोई अंतर नहीं है। कर्मयोगी को लोक-कल्याण के लिए जब गृहत्याग की आवश्यकता होती है, तब वह गृहत्यागी हो जाता है और जब गृहस्थ जीवन में रहकर लोक-कल्याण की अधिक संभावना रहती है,तब वह गृही होकर रहता है। गृहस्थ होना और गृह त्यागना उसकी लोकसेवा या लोक-कल्याण के अंग होते हैं। मुख्य उद्देश्य तो लोक कल्याण ही होता है। फिर भी गृहत्याग की अपेक्षा लोक–कल्याण साधना में गृहस्थ होने का अधिक महत्त्व है।

(अखण्ड ज्योति,जनवरी - 1951)

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
अखण्ड ज्योति संस्थान
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड
जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)

दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291, 7534812036, 7534812037, 7534812038, 7534812039
व्हाट्सएप नं. 9927086290
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	90
अंक	:	01
जनवरी	:	2026
पौष-माघ	:	2082
प्रकाशन तिथि	:	01.12.2025

वार्षिक चंदा

भारत में सामान्य डाक से	:	300/-
विदेश में	:	2800/-

आजीवन (बीसवर्षीय)

भारत में सामान्य डाक से	:	6000/-

देवकन्याएँ

(क्रमशः)

'देवकन्याएँ'—माँ की बेटियाँ बनकर माताजी के पास रहने लगीं। ये देश भर के अलग-अलग स्थानों पर रहने वाले कार्यकर्त्ताओं की कन्याएँ थीं। इनके माता-पिता ने इन्हें वंदनीया माताजी एवं परमपूज्य गुरुदेव के सान्निध्य व संरक्षण में जीवन-साधना के लिए भेजा था। गुरु-पिता का संरक्षण-मार्गदर्शन, माँ महाशक्ति के मातृत्व व ममता के आँचल की छाया में इनकी साधना सफल होने लगी। इनमें दिव्यता का देवत्व अंकुरित होने लगा और ये सबकी सब देवकन्याएँ बन गईं।

वंदनीया माताजी के सान्निध्य में ये सभी उनके साथ गायत्री महामंत्र की चौबीस महापुरश्चरण-महासाधना में सहभागी बनीं। सात्त्विक भोजन, तप अनुबंधों की व्रतशीलता, नियमित-निश्चित की गई गायत्री जप साधना—सबने मिलकर इनके तन-मन-जीवन को ज्योतिर्मय कर दिया। अखण्ड दीप की अखण्ड ज्योति ने इनमें प्राण-ऊर्जा प्रतिष्ठित की।

इनकी निश्चित साधनावधि के पश्चात ये छोटी-छोटी बालिकाएँ देश के अलग-अलग भागों में बड़े-बड़े कार्यक्रमों को संपन्न करने गईं। इनकी वाणी, इनका शील और सदाचार समीप आने वालों को बरबस सम्मोहित कर देता। ऐसे ही लखनऊ (उ.प्र.) के एक कार्यक्रम में उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल एम. चेन्ना रेड्डी, इनसे इतने अधिक प्रभावित हुए कि वे शांतिकुंज आए बिना न रह सके। शांतिकुंज आकर उन्होंने गुरुजी-माताजी को प्रणाम करते हुए कहा—"मैं तो बस, आप दोनों के दर्शन के लिए आया हूँ, जिन्होंने अपने तप से सामान्य मानवकन्याओं को सचमुच देवकन्याएँ बना दिया है। यहाँ आकर आपसे मिलकर मुझे विश्वास हो गया कि आप दोनों असंभव को संभव करने में समर्थ हैं।" ❑

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विषय सूची

- आवरण—1 ... 1
- आवरण—2 ... 2
- देवकन्याएँ ... 3
- **विशिष्ट सामयिक चिंतन** सबक सिखाती प्राकृतिक आपदाएँ ... 5
- गुरु समान दाता नहीं, याचक शिष्य समान ... 8
- आध्यात्मिक प्रेम ... 11
- **पर्व विशेष—सुभाषचंद्र बोस जयंती** राष्ट्रप्रेम की पुकार—सुभाष ... 13
- वासना से प्रेम की यात्रा ... 15
- हिम्मत और हौसले से सब कुछ संभव है ... 17
- लौकिक एवं पारलौकिक लक्ष्यप्राप्ति का साधन गायत्री-साधना ... 19
- ध्यान का द्वार है संगीत ... 22
- एक ही वृत्ति, एक ही माया, सब जग एक ही परमात्म समाया ... 24
- आदतों को कुछ ऐसे सुधारें ... 26
- सात्त्विक आहार-विहार अपनाएँ ... 28
- मानवीय चेतना का पतन ... 30
- यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता: ... 32
- प्रेरणा-प्रभाव से भरे भारत के अद्‌भुत गाँव ... 39
- धरती का वैकुंठ है श्री जगन्नाथपुरी धाम ... 42
- एक प्रेतात्मा के साथ संवाद ... 46
- नैतिक बल—वैयक्तिक एवं सामाजिक प्रगति का ठोस आधार ... 49
- **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—202** शैक्षणिक तकनीकों पर शोध ... 50
- **युगगीता—308** कर्त्ता से रहित, फलेच्छा से रहित कर्म है सात्त्विक कर्म ... 53
- **विश्वविद्यालय परिसर से—247** राष्ट्र-निर्माण की भूमिका लिखता विश्वविद्यालय ... 55
- कर्मों के अधीन है जीवन ... 58
- **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी** उपासना-साधना-आराधना ... 59
- **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला** स्वस्थ तन-स्वच्छ मन-सुखी समाज ... 65
- **अपनों से अपनी बात** विचारक्रांति-अभियान की जन्म जयंती ... 68
- जन्म शताब्दी वर्ष (कविता) ... 70
- आवरण—3 ... 71
- आवरण—4 ... 72

आवरण पृष्ठ परिचय

शताब्दी वर्ष का स्वर्णिम सूर्योदय

जनवरी-फरवरी, 2026 के पर्व-त्योहार

शनिवार	03 जनवरी	पूर्णिमा व्रत	सोमवार	26 जनवरी	गणतंत्र दिवस
मंगलवार	06 जनवरी	संकष्ट चतुर्थी	गुरुवार	29 जनवरी	जया एकादशी
सोमवार	12 जनवरी	स्वामी विवेकानंद जयंती/ युवा दिवस	शुक्रवार	30 जनवरी	शहीद दिवस
बुधवार	14 जनवरी	षट्तिला एकादशी/मकर संक्रांति	रविवार	01 फरवरी	संत रविदास जयंती
शुक्रवार	23 जनवरी	वसंत पंचमी/नेताजी जयंती	शुक्रवार	13 फरवरी	विजया एकादशी
रविवार	25 जनवरी	सूर्य सप्तमी	रविवार	15 फरवरी	महाशिवरात्रि
			गुरुवार	19 फरवरी	रामकृष्ण परमहंस जयंती
			शुक्रवार	27 फरवरी	आमलकी एकादशी

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

विशिष्ट सामयिक चिंतन

सबक सिखाती प्राकृतिक आपदाएँ

हिमालय क्षेत्र अपनी भौगोलिक विशेषता, प्राकृतिक सौंदर्य एवं सांस्कृतिक-आध्यात्मिक विशेषताओं के कारण सदैव से ही मानवता के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है। आज भी पुरातन काल से लेकर रामायण-महाभारतकालीन अवशेष यहाँ जीवंतता के साथ उपलब्ध हैं।

इन्हीं विशेषताओं के कारण पर्यटकों एवं तीर्थयात्रियों के लिए हिमालयी क्षेत्र किसी स्वर्ग से कम नहीं लगता, लेकिन विकास के नाम पर जिस तरह के प्रयोग हिमालय के भौगोलिक रूप से संवेदनशील पर्वतों के साथ हो रहे हैं और साथ में अनगढ़ पर्यटकों की भीड़ का सैलाब, जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ता मानवीय हस्तक्षेप तथा कुछ जलवायु परिवर्तन की वैश्विक विभीषिका, सब मिलकर अब हिमालय के जैविक तंत्र पर भारी पड़ने लगे हैं।

यहाँ का प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक संतुलन डगमगाने लगा है। विशेष रूप से बरसात का मौसम अब पिछले कुछ वर्षों से दहशत का पर्याय बन चुका है। जिस तरह की प्राकृतिक आपदाओं की लोमहर्षक एवं प्रलयंकारी घटनाएँ आएदिन बरसात में जुलाई से लेकर अगस्त माह के दौरान घट रही हैं, वे भयभीत करने वाली हैं एवं गंभीर चिंता एवं चिंतन का विषय हैं।

पहले जहाँ पूरे बरसात में छिटपुट बादल फटने व भूस्खलन की घटनाएँ होती थीं, वहीं अब एक ही दिन में चार से पाँच बादल फटने की घटनाएँ हो रही हैं और भूस्खलन की मार तो आए दिन पड़ रही है। इसके साथ जो मिट्टी-चट्टानों का सैलाब अचानक नदी-नालों में आता है और अपने रास्ते में पूरे-के-पूरे गाँव, बस्तियों, भवनों व कस्बों को बहाकर ले जाता है, वह भयावह है।

रास्ते में आने वाले पुल, सड़कें, वाहन सब कुछ इसकी चपेट में तहस-नहस हो रहे हैं। फिर पहाड़ी ढलान पर लगातार वर्षा के चलते चट्टान की मिट्टी का सरकना व पत्थरों की बरसात, जानलेवा भूस्खलन एवं दुर्घटनाओं का कारण बन रही हैं।

उत्तराखंड से लेकर हिमाचल एवं जम्मू-कश्मीर पर्यंत पहाड़ी राज्यों में सड़क व रेलवे लाइन पर हो रहे कार्यों के चलते पहाड़ों के अंदर कई किलोमीटर लंबी सुरंगों का निर्माण हो रहा है। हालाँकि सार्वजनिक सुविधा एवं सुरक्षा-दृष्टि से ये निर्माण वांछित हो सकते हैं, लेकिन बरसात के मौसम में ये विपत्ति का सबब बनकर सामने आ रहे हैं।

कहीं सुरंगों में पहाड़ी नालों का पानी प्रवेश कर रहा है तो कहीं निर्माणाधीन सुरंगों से पानी के फौवारे फूट रहे हैं। हिमालयी क्षेत्रों से उफनती नदियों के बाढ़ का पानी फिर मैदानी क्षेत्रों में कहर बनकर टूट रहा है। इसी वर्ष गंगा एवं यमुना का जल निचले क्षेत्रों में कस्बों व शहरी इलाकों को जलमग्न होने की स्थिति में ला चुका है। प्रयागराज से लेकर बनारस में इसकी विकराल स्थिति कई दिनों तक समाचारों की सुर्खी बनी रही।

5 अगस्त, 2025 को उत्तराखंड के धराली में हुए प्रकृति के प्रलयंकारी तांडव ने सबके रोंगटे खड़े कर दिए थे, जिसने 2013 के केदारनाथ

जलप्रलय की स्मृतियाँ ताजा कर दीं और इसका जख्म लंबे समय तक स्थानीय लोगों से लेकर तीर्थयात्रियों को सालता रहेगा।

खीरगाड़ में इसके पीछे श्रीखंड शिखर की ओर से ग्लेशियर व झीलों के फूटने से आया जलसैलाब कुछ ही पलों में पूरे धराली कस्बे को जलमग्न कर तहस-नहस कर गया। इसके बाद लगातार कुछ अंतराल में आते जलसैलाब ने चार-पाँच दिनों में पूरे धराली को 30-35 फीट गहरे मलबे की गाद में ढककर इसके अस्तित्व को जैसे मिटा दिया।

इसमें जहाँ साठ-सत्तर लोगों के दबकर जीवन से हाथ धोने की आशंका रही है, वहीं सारे होटल, होम स्टे, सेब के बागान ताश के पत्तों की भाँति इस कई मंजिला ऊँचे जलप्रलय की आँधी में ढहते दिखे। अपनी जान को बचाने के लिए भागते लोगों को बचाव का भी समय नहीं मिला। धराली में पौराणिक महाभारतकालीन कल्पकेदार मंदिर भी मलबे के ढेर में समा गया।

धराली से ही तीन किलोमीटर नीचे हर्षिल में बसे सेना के कैंप में भी उसी दिन तेलगाड़ में आए सैलाब में भारी तबाही हुई, जिसमें सैकड़ों सैनिकों के दबने की आशंका रही और इसके साथ ही यहाँ के व धराली से आ रहे मलबे से भागीरथी नदी पर डेढ़ किलोमीटर लंबी झील का निर्माण हो गया, जिसके साथ आगे बसे हुए शहरों में विशेषकर समीप के हर्षिल शहर में दहशत का माहौल रहा।

इसी तरह अगस्त माह में ही जम्मू-कश्मीर के किश्तवाड़ क्षेत्र में बादल फटने से आए विकराल जलप्रलय ने भी सैकड़ों लोगों की जान ली। इसका दृश्य भी किसी खौफनाक प्रलय से कम नहीं था। इस तरह वर्ष—2025 की बरसात में उत्तराखंड के धराली, हर्षिल हों या हिमाचल की तीर्थन घाटी, पार्वती घाटी, जंजिहली घाटी या जनजातीय किन्नौर, लाहौलस्पिती क्षेत्र हों या जम्मू-कश्मीर के रामवन एवं किश्तवाड़ क्षेत्र, प्राकृतिक आपदा की मार ने जनजीवन को अस्त-व्यस्त किया और परिणामस्वरूप थोड़ी-सी भी बारिश अब लोगों के लिए दहशत का कारण बन रही है।

उत्तराखंड की ही राजधानी देहरादून में सूखे बरसाती नदी-नालों ने मध्य अगस्त में एक तरह से जलप्रलय की स्थिति खड़ी कर दी थी। और ऐसी घटनाएँ पहाड़ की तलहटियों पर बसे तमाम कस्बों व शहरों में आम होती जा रही हैं।

इन घटनाओं के कारणों पर विचार करने पर कई कारक सामने आते हैं। जिनमें पहला है— मानसून का बदलता स्वरूप। वैज्ञानिकों के अनुसार मानूसन का बदलता स्वरूप पहाड़ों के लिए खतरनाक साबित हो रहा है।

जलवायु वैज्ञानिकों का कहना है कि अब मानसून पुराने ढर्रे पर नहीं चलता। अरब सागर पर गरम होती हवाएँ, मध्य एशिया में तेजी से बढ़ते तापमान और दक्षिण-पश्चिमी हवाओं का उत्तर की ओर झुकाव, ये सब मिलकर उत्तर भारत के हिमालयी क्षेत्रों में बारिश के घातक समीकरण बना रहे हैं।

पिघलते ग्लेशियर और कमजोर होती चट्टानें, एक अन्य बड़ा खतरा है। डीआरडीओ और भू-विज्ञान मंत्रालय के आँकड़ों के अनुसार, हिमालय के ग्लेशियर हर वर्ष औसतन 15 मीटर पीछे हट रहे हैं। कुछ क्षेत्रों में तो यह दर 20 मीटर से अभी अधिक है।

वाडिया इन्स्टीट्यूट ऑफ हिमालयन इकोलॉजी के वैज्ञानिक कहते हैं कि जैसे-जैसे ग्लेशियर पिघलते हैं, नीचे की भूमि अस्थिर होती जाती है। पिघलती बरफ, बहती चट्टानें और अचानक बनने वाली झीलें टूटने पर नीचे विप्लव की स्थिति उत्पन्न करती हैं।

जलवायु-परिवर्तन के अंतरसरकारी पैनल की रिपोर्ट के अनुसार उच्च ऊँचाई वाले क्षेत्रों में हर 1 डिगरी तापमान वृद्धि के साथ वर्षा की तीव्रता 15

प्रतिशत बढ़ जाती है, जो सामान्य से दुगनी दर है और अब ऊँचे क्षेत्रों में बरफ के स्थान पर बारिश होने लगी है; क्योंकि वह शून्य डिगरी समताप रेखा (जीरो डिगरी आइसोथर्म) से ऊपर चली गई है, जिस स्तर पर बरफ गिरती है।

जहाँ बरफ गिरती थी, वहाँ अब मूसलाधार वर्षा हो रही है, जो बरफ की तरह शांत नहीं होती, बल्कि अपने साथ मिट्टी, चट्टानों व वृक्षों को भी बहाकर ले जाती है।

इस तरह वैश्विक जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव में, हिमालय वैश्विक औसत दर से तीन गुना तीव्रता से गरम हो रहा है। बढ़ते तापमान ने हिमालयी ग्लेशियरों के पिघलने और बरफ के आवरण के क्षरण को तीव्र कर इस समस्या को और बढ़ा दिया है। इससे ग्लेशियर झीलें तेजी से भर जाती हैं, जिससे अतिप्रवाह और निचले क्षेत्रों में बाढ़ का खतरा बढ़ जाता है।

इसके अतिरिक्त ग्लेशियरों के पतले होने से पर्वतीय ढलानों में अस्थिरता बढ़ रही है। इसका परिणाम यह है कि अब हिमालय चेतावनी नहीं दे रहा, वरन वो सीधे विभीषिकाओं को जन्म दे रहा है। हिमालयी क्षेत्रों में अंधाधुंध विकास इसका एक बड़ा कारण है।

विशेषज्ञों का मानना है कि हम अंधाधुंध विकास के साथ विनाश को निमंत्रण दे रहे हैं। 2013 की केदारनाथ त्रासदी, 2021 की ऋषिगंगा बाढ़ और 2025 की धराली आपदा—तीनों एक जैसी कहानियाँ बयाँ कर रहे हैं, जो हमारी नीतिगत विफलता और योजनात्मक अक्षमता को दरसा रही हैं और जिसकी हमें भारी कीमत चुकानी पड़ रही है।

यह एक दु:खद एवं चिंताजनक सत्य है कि अधिकांश होटल, सड़कों, सुरंगों और जलविद्युतीय परियोजनाओं का निर्माण बिना भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण के किया जाता है। मालूम हो कि हिमालय विश्व की सबसे युवा पर्वत-शृंखला है। अभी यह भू-गर्भीय दृष्टि से अधपका है और हम इसमें ऐसे निर्माण कर रहे हैं, जैसे यह किसी पठार पर बना हो।

अत: स्थिति यह है कि एक सीमा के बाद वर्षा की हर बूँद अब विनाशक होती जा रही है, जिसकी भयावह विभीषिका का भुक्तभोगी बनने के लिए वहाँ का हर निवासी विवश है। फिर अब हिमालय कोई अदृश्य खतरा नहीं है, वो हर वर्ष, हर मानसून, हर जलप्रलय में हमें याद दिला रहा है कि मैं थक चुका हूँ, सहन करते-करते।

अब हमारी बारी है सीखने की। क्या हम तैयार हैं या फिर अगली बार किसी केदारनाथ या ऋषिगंगा या धराली की आपदा का इंतजार कर रहे हैं। समाधान की दृष्टि से विचारें तो इन सब घटनाओं से सबक लेने की आवश्यकता है और विकास से जुड़ी विसंगतियों को समझते हुए प्रकृति से तालमेल बिठाते हुए विकास के समावेशी मानकों को अपनाने की आवश्यकता है।

हिमालय के ऊपरी भागों में, स्वचालित चेतावनी यंत्र लगाने होंगे, जो जान बचाने में निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं। इसके लिए हमें हर घाटी, जलग्रहण क्षेत्र व पहाड़ी की नब्ज पढ़नी होगी, तभी हम समय रहते चेतावनी जारी कर पाएँगे। नदियों के पुराने किनारों पर निर्माण की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

योजना बनाते समय पहाड़ी क्षेत्रों की पारिस्थितिक संवेदनशीलता और भूकंपीय जोन को ध्यान में रखना होगा। विकास के साथ प्रकृति एवं संस्कृति पर ध्यान देना होगा और ऐसे सभी विकास कार्यों पर सख्त निगरानी रखनी होगी, जिससे प्राकृतिक संतुलन एवं सांस्कृतिक शुचिता प्रभावित होती हो।

आखिर ये प्राकृतिक आपदाएँ मनुष्य की प्रकृति से छेड़खानी के साथ अपने सांस्कृतिक मूल्यों के साथ गहन समझौते एवं प्रदूषण का भी परिणाम हैं। ❑

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

गुरु समान दाता नहीं याचक शिष्य समान

गुरु की महिमा अद्भुत है, अद्वितीय है, अतुलनीय है, अलौकिक है, असाधारण है और अवर्णनीय है। गुरु के विषय में कहा गया है—'**हरि ने जनम दियो जग माही, गुरु ने आवागमन छोड़ाही**' अर्थात भगवान ने जीव को जग में जन्म दिया है, लेकिन गुरु उसे आवागमन से मुक्ति दिलाते हैं। तभी तो गुरु की कृपा से सुख-दुःख और जन्म-मृत्यु रूपी भवसागर से पार उतर जाने वाले और भगवद्साक्षात्कार करने वाले गोस्वामी तुलसीदास जी रामचरितमानस में गुरु की वंदना करते हुए कह रहे हैं—

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा॥
अमिअ मूरिमय चूरन चारू।
समन सकल भव रुज परिवारू॥
सुकृति संभु तन बिमल बिभूती।
मंजुल मंगल मोद प्रसूती॥
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी।
किएँ तिलक गुन गन बस करनी॥
श्रीगुर पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिव्य दृष्टि हियँ होती॥
दलन मोह तम सो सप्रकासू।
बड़े भाग उर आवइ जासू॥
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के।
मिटहिं दोष दुख भव रजनी के॥
सूझहिं राम चरित मनि मानिक।
गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक॥

अर्थात मैं गुरु महाराज के चरण रज की वंदना करता हूँ, जो सुरुचि (सुंदर स्वाद), सुगंध तथा अनुराग रूपी रस से पूर्ण है। वह अमर मूल (संजीवनी जड़ी) का सुंदर चूर्ण है, जो संपूर्ण भवरोगों के परिवार को नाश करने वाला है।

वह रज सुकृती (पुण्यवान पुरुष) रूपी शिवजी के शरीर पर सुशोभित निर्मल विभूति है और सुंदर कल्याण और आनंद की जन्मदाता है, भक्त के मनरूपी सुंदर दर्पण के मैल को दूर करने वाली और तिलक करने से गुणों के समूह को वश में करने वाली है।

श्री गुरु महाराज के चरण-नखों की ज्योति मणियों के प्रकाश के समान है, जिसका स्मरण करते ही हृदय में दिव्यदृष्टि उत्पन्न हो जाती है। वह प्रकाश अज्ञानरूपी अंधकार का नाश करने वाला है, वह प्रकाश जिसके हृदय में आ जाता है, उसके बड़े भाग्य हैं। उसके हृदय में आते ही हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसाररूपी रात्रि के दोष-दु:ख मिट जाते हैं एवं श्रीरामचरित्ररूपी (भगवच्चरित्ररूपी) मणि और माणिक्य, गुप्त और प्रकट जहाँ जो जिस खान में हैं, वे सब दिखायी पड़ने लगते हैं।

प्रस्तुत चौपाइयों में संत तुलसीदास जी यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि गुरुकृपा व गुरुज्ञान से शिष्य के जीवन से अज्ञानरूपी अंधकार का समूल नाश हो जाता है और उसके हृदय में विवेकरूपी निर्मल नेत्र खुल जाते हैं—जिनसे भगवान जहाँ भी हैं, जैसे भी हैं, वे उसे दिखाई पड़ने लगते हैं अर्थात उसे भगवद्साक्षात्कार हो जाता है।

अपने निज जीवन में गुरु-कृपा को अनुभव करने वाले और गुरु-कृपा से ब्रह्मज्ञान पाकर घट-घट में राम को देखने वाले संत कबीर ने गुरु के विषय में क्या खूब कहा है—

गुरु समान दाता नहीं, याचक शिष्य समान।
तीन लोक की संपदा, सो गुरु दीन्हा दान॥
लक्ष कोस जो गुरु बसै, दीजै सुरति पठाय।
शब्द तुरी असवार ह्वै, छिन आवै छिन जाय॥

गुरु को शिर पर राखिये, चलिये आज्ञा माहिं।
कहैं कबीर ता दास को, तीन लोक भय नाहिं॥
गुरु मूरति गति चंद्रमा, सेवक नैन चकोर।
आठ पहर निरखत रहे, गुरु मूरति की ओर॥
गुरु शरणागति छाड़ि के, करै भरोसा और।
सुख संपति की कह चली, नहीं नरक में ठौर॥
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास।
गुरु सेवा ते पाइये, सद्गुरु चरण निवास॥
अहं अगिन निशि दिन जरै, गुरु सो चाहे मान।
ताको जम न्योता दिया, होउ हमार मेहमान॥
पंडित पढ़ि गुनि पचि मुये, गुरु बिन मिलै न ज्ञान।
ज्ञान बिना नहिं मुक्ति है, सत्य शब्द परमान॥
मूल ध्यान गुरु रूप है, मूल पूजा गुरु पांव।
मूल नाम गुरु वचन है, मूल सत्य सतभाव॥

अर्थात गुरु के समान कोई दाता नहीं और शिष्य के समान कोई याचक नहीं; क्योंकि गुरु ने त्रयलोक की संपत्ति से भी बढ़कर ज्ञान-दान शिष्य को दे दिया। इसलिए ऐसे सद्गुरु यदि लाख कोस पर भी निवास करते हों, तो भी अपना मन उनके चरणों में लगाते रहो। गुरु के सदुपदेशरूपी घोड़े पर सवार होकर अपने मन से गुरुदेव के पास क्षण-क्षण आते-जाते रहना चाहिए अर्थात मन से गुरु का सदैव ध्यान करना चाहिए और उनके उपदेश पर चलना चाहिए।

गुरु को अपना सिर-मुकुट मानकर, उनको सर्वोपरि मानकर उनकी आज्ञा में चलो। ऐसे शिष्य-सेवक को तीनों लोक में कोई भय नहीं हो सकता। गुरु की मूर्ति चंद्रमा के समान है और शिष्य-सेवक के नेत्र चकोर के तुल्य हैं। अतः आठों पहर गुरु-मूर्ति रूप चंद्रमा की ओर चकोर की तरह देखते रहो। उन्हें अपने मन, हृदय और आत्मा में देखते रहो।

ऐसे ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मनिष्ठ गुरु की शरणागति से बढ़कर कुछ भी नहीं। अतः ऐसे गुरु की शरणागति को छोड़कर जो अन्य दैव-गोसैंया का भरोसा करता है, उसकी सुख-संपत्ति की कौन कहे, उसे तो नरक में भी स्थान नहीं मिलता अर्थात उसे अन्यत्र कहीं भी शरण नहीं मिलती, पर शिष्य को गुरु की शरणागति पा लेने के बाद भी सावधान ही रहना चाहिए; क्योंकि ब्रह्मनिष्ठ गुरु की शरणागति पाकर भी यदि शिष्य उनसे ज्ञान ग्रहण करने के बजाय अहंकार की आग में दिन-रात जलता है और गुरु से ही अपना मान-सम्मान चाहता है, तो उसको मानो बुरी वासनारूपी यम ने ही निमंत्रण दिया है कि आओ तुम हमारे पाहुन बनो—गुरु-शरण योग्य तुम नहीं हो।

बड़े-बड़े विद्वान शास्त्रों को पढ़ते रहते हैं, परंतु गुरु के बिना उन्हें ज्ञान नहीं मिलता और ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती। इसलिए सारे भ्रम-संशय, संदेह, मिथ्या, मान-अपमान को तजकर गुरु की शरण में आ जाओ और पूर्ण भक्तिभाव व समर्पण के साथ गुरु का ध्यान करो; क्योंकि गुरु का ध्यान ही ध्यान का मूल है। गुरु-चरणों की पूजा ही पूजा का मूल है। गुरु के वचनामृत ही सब नामजपों से बढ़कर हैं। सत्य के साक्षात्कार के लिए सत्य की जिज्ञासा ही सत्य का मूल है।

उपर्युक्त दोहों में दरअसल संत कबीर इस बात पर जोर दे रहे हैं कि गुरु के समान कोई दाता नहीं, जो शिष्य को दान में ब्रह्मज्ञान ही दे देते हैं और उस शिष्य के समान कोई याचक नहीं, जो गुरु से सिर्फ और सिर्फ ब्रह्मज्ञान, ब्रह्मप्राप्ति की ही याचना करता है।

यदि शिष्य में सत्य को जानने की जिज्ञासा हो, उसके लिए ब्रह्मजिज्ञासा ही सर्वोपरि हो, तो सद्गुरु उसकी सच्ची जिज्ञासा से अनभिज्ञ नहीं रहते और वे उसकी जिज्ञासा पूरी करके रहते हैं और उसे सत्य का साक्षात्कार, ब्रह्म-साक्षात्कार होकर रहता है। इसमें कोई संदेह नहीं। अस्तु समस्त संशय, संदेह को तजकर शिष्य को गुरु के समक्ष संपूर्ण समर्पण कर देना चाहिए।

पूर्ण समर्पण से ही शरणागति पूर्ण होती है और प्राप्त होती है। ऐसी शरणागति से शिष्य को सब कुछ प्राप्त हो जाता है। उसे त्रयलोक से भी बड़ी संपदा अर्थात ब्रह्मज्ञान, भगवत्प्राप्ति हो जाती है।

गुरु की आज्ञा ही शिष्य के लिए भगवद्आज्ञा है। गुरु की सेवा ही भगवत्सेवा है। गुरु का कार्य करना ही भगवत्कार्य करना है। बड़े हतभागी हैं वे लोग, जो सद्गुरु को पाकर भी सद्गुरु से ब्रह्मजिज्ञासा के बजाय सांसारिक सुख-संपदा की याचना और कामना करते हैं।

सागर के पास बैठकर भी उसमें छलाँग लगाने के बजाय कोई सागर से दो बूँद जल-याचना करे तो भला उसे कौन समझदार कहेगा? बड़ा बड़भागी है वह व्यक्ति, वह शिष्य, वह साधक, वह आराधक, वह उपासक; जो निज मान-अपमान, संशय, संदेह को तजकर अपने गुरु से गुरु के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता, अपने भगवान से भगवान के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता; क्योंकि उसे भगवान से कम कुछ भी स्वीकार नहीं होता। वह सिर्फ और सिर्फ गुरु को चाहता है। वह सिर्फ और सिर्फ भगवान को चाहता है। इससे कम उसे कुछ भी स्वीकार नहीं एवं इससे कम उसे कुछ भी पसंद नहीं।

उसके लिए गुरु का आदेश ही ईश्वर का आदेश है। उसके लिए गुरु की सेवा ही ईश्वर की सेवा है, ईश्वर की पूजा है। उसके लिए गुरु-कार्य ही ईश्वरीय कार्य है। उसके लिए गुरु की इच्छा ही सर्वोपरि है। उसके लिए गुरु की इच्छा ही ईश्वर की इच्छा है। उसके लिए गुरु की योजना ही ईश्वरीय योजना है; जिसमें उसे अपना तन, मन, प्राण सब कुछ अर्पण करना है और सचमुच यही है सच्ची गुरुभक्ति, सच्ची ईश्वरभक्ति—जिससे शिष्य, साधक, उपासक, आराधक निहाल हो जाता है। ❑

ऋषि कृतु से उनके शिष्य ने वेदों की एक उक्ति का अर्थ पूछा तो ऋषि ने शिष्य से वो अंश पढ़कर सुनाने को कहा। शिष्य ने प्रत्युत्तर में ऋषि से पूछा—"गुरुवर! यदि आपको सूत्र स्मरण नहीं है तो आप उसका अर्थ कैसे बता पाएँगे?"

ऋषि हँसे और बोले—"वत्स! यह बताओ कि चंद्रमा कहाँ है?" शिष्य ने आकाश की ओर इशारा किया तो ऋषि बोले—"चंद्रमा आकाश में है कि तुम्हारी उँगली में है।" शिष्य बोला—"गुरुदेव! उँगली में चंद्रमा कैसे हो सकता है? ये तो मात्र उस ओर इशारा है।" ऋषि कृतु बोले—"पुत्र! ऐसे ही वेद-वाक्य इशारा मात्र हैं। सच्चा ज्ञान आत्मा के अंदर सन्निहित है। बोध होने पर ज्ञान-चक्षु खुल जाते हैं तब सूत्रों को रटना नहीं पड़ता व ज्ञान की धारा अंदर से ही प्रवाहित होने लगती है।"

शिष्य की जिज्ञासा का समाधान हो गया।

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

आध्यात्मिक प्रेम

एक प्रेम की धारा वह है, जो बाहर को बहा करती है जिसमें हम वस्तुओं, व्यक्तियों एवं विचारों से एकात्म स्थापित कर आगे बढ़ते हैं। दूसरी वह है, जिसे आध्यात्मिक प्रेम कहते हैं। यह हमें हमारी आत्मा से जोड़ती है तथा हमें किसी भी प्रकार असहाय या परावलंबी नहीं रहने देती।

आध्यात्मिक प्रेम इस संसार का पारस है, जो यदि किसी के पास है तो वह धरती की स्वर्ण खदानों से बहुमूल्य उपहार प्राप्त कर लेता है। आध्यात्मिक प्रेम ही जीवन का नवनिर्माण करने का साधन है। अब यह समझते हैं कि जब यह वस्तु, विचार एवं किसी भी अन्य प्रकार के भावों से परे है तो इसका स्वरूप किस प्रकार हमें दृष्टिगोचर हो सकता है।

सबसे पहले तो अध्यात्म यह कहता है कि हम यह जानें कि बाहर विचरण किस भावना से हो रहा है—क्षुद्रता से या महानता से, स्वार्थ से या परमार्थ की भावना से। जब अपना चित्त निर्मल हो जाता है तब उसे प्रकाश का एवं अविरल शांति का प्रवाह मिलने लगता है। अपना व्यक्तिगत सुख-चैन जब इस संसार की पीड़ा को दूर करने में जा लगे, तो समझना चाहिए कि आनंद का झरना फूट पड़ा व ईश्वर से हमने बड़ी अद्‌भुत कृपा प्राप्त की है।

हमें यह समझना चाहिए कि जिस चीज को हम चाहते हैं, वह बाहर मिलने वाली नहीं। उस असीम शांति को, उस महान अनुशीलन को तथा उस अद्‌भुत शक्ति-प्रवाह को प्राप्त करने हेतु नई विचारणा को धारण करना पड़ेगा। उसे आध्यात्मिक दृष्टि से प्रज्ञा भी कहते हैं एवं आध्यात्मिक प्रेम उसका सुफल है।

आज मानवता जिस मोड़ पर खड़ी है, वहाँ से उसे एक ही संबल बाहर निकाल सकता है, वह है अध्यात्म का। हमारे देश पर अनेकों आक्रमण हुए, जितनी हिंसा और बरबादी हम लोगों ने झेली, उतनी किसी अन्य राष्ट्र ने नहीं, परंतु फिर भी हम आज एक खड़े हैं, क्यों? क्योंकि हमारा आधार वह आध्यात्मिकता है जो पीड़ा में रहकर भी हमें पीड़ा-मुक्त कर दे। जो ईश्वर से यही प्रार्थना करे कि उसकी दी हुई दिव्यदृष्टि को हम सही प्रयोजनों में ही लगाएँगे, यों बरबाद नहीं होने देंगे।

हमारा धर्म महान है क्योंकि वह जिस आध्यात्मिकता के आधार पर खड़ा है, उसकी ऊँचाई को नाप पाना असंभव है। मानवता को हमने जो इतने अद्‌भुत हीरे दिए, उसका कारण ही यह था कि हम अपनी आध्यात्मिकता को बचा पाए। हमारा सोया अंत:करण जाग सके, उसके भीतर से दैवी प्रकाश का उत्सर्जन हो तथा उसका अभियान पूरा हो सके तो यह समझना चाहिए कि हमने विवेक-दृष्टि प्राप्त की, दु:खों से मुक्त हो सके।

जिस प्रेम की यहाँ पर बात की जा रही है, वह अत्यंत ही व्यापक है। उसके सुंदर स्वरूप का वर्णन करने में शब्द कम पड़ जाएँगे। आध्यात्मिकता का परिणाम है शुद्ध अंत:करण—उस अंत:करण से सृजित भाव नूतन व्यक्तित्व का सृजन करते हैं। हमें यह समझना चाहिए कि जिस दैवी मनोभूमि के हम अधिकारी हैं, जिस प्रज्ञा ने हमारे ऊपर उपकार किया, वह वास्तव में संसार में भटकने के योग्य नहीं। उसे आध्यात्मिक प्रेम का शुद्ध स्वरूप ग्रहण करना चाहिए एवं अपने विकारों को मिटाकर अपरिमित स्वभाव से जुड़ना चाहिए।

जिस दिन हम आध्यात्मिक प्रेम की वास्तविक परिभाषा जान जाएँगे तथा उसे हृदयंगम कर पवित्र एवं महान बन सकेंगे—उस दिन हमारे भीतर एक दैवी आभा एवं परम अभीप्सा का जन्म होगा। तब हम भाग्यवान कहलाएँगे एवं तब से हमारे सभी प्रयोजन उस एक गति को प्राप्त करेंगे, जिसे आध्यात्मिक दृष्टि से अनुपम एवं अलौकिक कहा जा सकेगा। ❑

युवक कुलभूषण पाठक ने एम.ए. पास किया तो उसके पास अच्छी नौकरियों के प्रस्ताव आने लगे। उन दिनों बहुत ज्यादा व्यक्ति इतनी उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं करते थे।

उसके ही शहर के पं. नीलांबर शास्त्री उसके लिए अपनी पुत्री का विवाह प्रस्ताव लेकर आए। कुलभूषण के पिता ने उनसे अत्यधिक दहेज की माँग की, परंतु कुलभूषण नैष्ठिक व्यक्तित्व के मालिक थे, उन्होंने अपने पिता से इस कुप्रथा का विरोध किया। उनके पिता क्रुद्ध होकर बोले—"हमने तुम्हारी शिक्षा पर बहुत खरच किया है, क्या तुम्हारे पर हमारा कोई अधिकार नहीं।"

यह सुनकर कुलभूषण चुप हो गए, पर उनके अंतर्मन ने पिता का यह व्यवहार स्वीकार नहीं किया। पं. नीलांबर शास्त्री ने जैसे-तैसे दहेज की व्यवस्था की और पुत्री का विवाह कुलभूषण से कर दिया।

विवाह के पश्चात जब बरात विदा होने लगी तो कुलभूषण ने वहाँ से जाने से इनकार कर दिया और अपने पिता से बोले—"इतना दहेज पा लेने के बाद आपका मुझ पर अधिकार नहीं, अब मैं शास्त्री जी का ऋणी हूँ। यहीं रहकर कमाऊँगा और इस ऋण को चुकता करूँगा।" उत्तर देने के लिए अब उनके पिता के पास शब्द नहीं थे। यदि सभी युवक दहेज न लेने के संकल्प पर अडिग हो जाएँ तो दहेज नामक असुर का अंत समाज से तुरंत हो जाए।

पर्व विशेष- सुभाषचंद्र बोस जयंती

राष्ट्रप्रेम की पुकार-सुभाष

भारत की सभ्यता ने विश्व को अनेक मणिमुक्तक दिए हैं, पर सुभाष चंद्र बोस जैसी थाती कम ही देखने को मिलती है। इसका कारण है उनका प्रचंड तेज जो उन्होंने अँगरेजों के विरुद्ध संघर्ष में दिखाया, जिसके बल पर वे अंत तक लड़ते रहे तथा मातृभूमि के लिए अपना जीवन अर्पण कर सके।

सुभाष हम सभी के हृदय के अत्यंत ही निकट हैं; क्योंकि जिस युवा अवस्था में वे सक्रिय रूप से देश-जाति की सेवा में लग पड़े थे तथा जैसा पराक्रम उन्होंने दिखाया, वह दुर्लभ है। उन्होंने कितने ही लोगों को प्रेरित किया कि वे समय की माँग के अनुरूप आगे आएँ, विकट परिस्थितियों में भी भारतमाता का आँचल न छोड़ें तथा वह कर गुजरें, जिसके लिए उनका आवाहन हुआ है।

हमारे महापुरुषों का जीवन सदा से त्याग और तपस्या से अभिभूत रहा है। किसी ने भी पीछे मुड़कर नहीं देखा और यदि अवसर आया तो अपने प्राण भी निछावर कर दिए। हम उस भूमि में पैदा हुए हैं, जिसने हमें यह संस्कार प्रदान किया कि आप भीतर से सबल बनिए तब सारा संसार आपके समक्ष झुकेगा। आपकी प्रतिभा लोक-मंगल के लिए चल पड़ेगी तथा आप वह सब कर पाएँगे, जिसके लिए आपने यह जन्म लिया है।

सुभाष चंद्र बोस हमारे आदर्श क्यों हैं ? इसका कारण यह है कि जिस समय हमें पिछड़े लोगों का देश समझा जाता था तब वे विदेश में पढ़ाई कर, वहाँ की सर्वोच्च परीक्षा में उत्तीर्ण हो तथा विश्व भर के प्रमुख संस्थानों का श्रेष्ठ ज्ञान प्राप्त कर ही वापस लौटे।

उन्हें पता था कि अँगरेज उन्हें अपनी सत्ता के समक्ष बहुत कुछ करने नहीं देंगे। उन्होंने त्यागपत्र दिया तथा असहयोग आंदोलन में सहभाग करने पहुँच गए। अपने जैसे कितने ही क्रांतिकारियों को तैयार कर नेताजी सुभाष ने दिखा दिया कि मैं किसी भी प्रकार अँगरेजों की दासता के समक्ष झुकने वाला नहीं हूँ। उन्होंने जनता की पीड़ा को समझा, समाजसेवा के विभिन्न प्रकल्पों में वे उपस्थित रहे तथा धीरे-धीरे अपनी पैठ एक राष्ट्रव्यापी नेता के रूप में की।

उन्होंने जो भी कहा उस पर चलने हेतु हर कोई तत्पर होता गया; क्योंकि उनका व्यक्तित्व ही इतना महान था कि वे किसी को भी उससे आकर्षित-उद्वेलित कर देते थे। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि सुभाष जैसे क्रांतिकारी बार-बार धरती पर नहीं आते। जो व्यक्ति दूसरे राष्ट्रों की सेना से मिलकर, वहाँ के लोगों को अपना बनाकर अपने देश की स्वतंत्रता के लिए कार्य कर सकता है—वह निश्चित ही विशेष है।

उनके जीवन के अंतिम वर्ष हर प्रकार से अँगरेजों से लड़ते-लड़ते बीते तथा उन्होंने कभी हार नहीं मानी। ब्रिटिश नेवी में फूट डाल उन्होंने दिखा दिया कि अब और अधिक उनकी सत्ता को स्वीकार नहीं किया जाएगा। एक विमान हादसे में दुर्घटनाग्रस्त होकर उनका जीवन समाप्त हुआ, परंतु उनके संदेश को आज तक कोई भी भुला न सका है। सुभाष अपने यौवन से ही एक मिलिट्री कमांडर की भूमिका प्रस्तुत करने लगे थे। उसी समय जब कोलकाता (कलकत्ता) में

प्लेग आया तो कितने ही अस्पतालों में जा-जाकर उन्होंने सेवाएँ दीं।

हर समय देश के लिए चिंतित रहना, कभी उससे स्वयं को दूर न अनुभव करना तथा अपनी भूमिका के निर्वहन के लिए तैयार रहना—उनके स्वभाव में था। भारत यदि आजाद हुआ तो उसमें अग्रणी भूमिका निभाने वाले वे ही थे। नीति में कुशल, परंतु अपने हृदय से आत्मावलंबी, बचपन से ही योग एवं अध्यात्म को अपनाने वाले तथा अनन्य साहित्यप्रेमी के रूप में वे एक अद्भुत मिसाल थे।

अपने मित्रों में वे राष्ट्रप्रेम की भावना भरते थे तथा स्वयं से ही प्रेरित हो भारत का भाग्य बदलने को तत्पर रहते थे। उन्हें पता था कि एक दिन उन्हें कष्ट-कठिनाइयों से जूझते हुए अपने स्वप्न को साकार करना है। यह तभी होगा, जब वे अभी से ही उस दिशा में प्रयत्न करें।

उनकी जेल-यात्रा भी प्रेरणादायी रही। जेल में उनका स्वास्थ्य दयनीय स्थिति में पहुँच चुका था। वे कुछ खा-पी नहीं रहे थे। देश की परतंत्रता उन्हें चुभ रही थी। अपने इसी एकांत में उन्होंने जीवन के सत्य पर अपने विचार प्रकट किए कि दुःख वास्तव में अपने भीतर है तथा बाहर तो मात्र उसका प्रतिबिंब होता है। हम सदा आनंदित रह सकते हैं यदि परिस्थितियों पर निर्भर रहना छोड़ दें।

उन्होंने ईश्वर की जीवंत अनुभूति की तथा जेल से छूट उसी शक्ति के साथ जुट पड़े जो कि उन्हें मिली हुई थी। इसके आगे का उनका जीवन और अधिक संघर्ष भरा रहा; क्योंकि तब उन्हें देश की कमान सँभालनी थी।

वे राजनीति में रहे तथा अपने अनुसार कांग्रेस को बढ़ता हुआ देखना चाहते थे। जब उनके विरोधियों ने ऐसा न होने दिया तो उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा तथा भारत का यह सिपाही अपने ही विधान अनुसार चल पड़ा। तब कोई नहीं जानता था कि सुभाष इतना बड़ा कार्य करेंगे। सच में अद्भुत लगन थी उनकी। उन्होंने द्वितीय विश्वयुद्ध की परिस्थितियों में जिस प्रकार से देश की जनता का आवाहन किया, वह उनके दुर्लभ चरित्र का परिचायक है।

हम सुभाष को एक महान क्रांतिकारी के रूप में देखते हैं, परंतु उनके हृदय को पहचानने की आवश्यकता है, जिसने अकेले चलने का साहस दिखाया। वे यदि न होते तो अन्यों को वह प्रेरणा न मिल पाती कि इस कठिन समय में किसी भी प्रकार पीछे हटने या अपनी अशक्तता का परिचय देने की आवश्यकता नहीं।

वे कहते थे कि हमें तो उस लक्ष्य को सिद्ध करना है, जिसके लिए हमारी पुकार हुई है। उन्होंने वह कर दिखाया, परंतु दुर्भाग्यवश काल का ग्रास बन जाने से वे अंतिम रूप से भारत की विजय न देख सके।

वे तो उस योद्धा की तरह थे, जो बिना रुके आगे बढ़ते गए। भारत उन्हें सदा याद रखेगा। इतिहास में जब भी उनका नाम लिया जाएगा, तब वे स्वर्णाक्षरों में पूजे जाएँगे। हमें उनसे सीख लेनी चाहिए कि तन-मन-प्राण सब उत्सर्ग की दिशा में होने चाहिए। कुछ भी हो, हमें अपने पथ से हटना नहीं चाहिए। ❑

परिष्कृत जीवन को परिपुष्ट जीवन कह सकते हैं और पूजा-पाठ को शृंगार। स्वास्थ्य के रहते यदि शृंगार भी सजा लिया जाए तो हर्ज नहीं, पर अकेले शृंगार सज्जा बनाकर कोई कृषकाय, जरा-जीर्ण, रोगग्रस्त मात्र उपहासास्पद ही बन सकता है। इन दिनों लोग शृंगार को ही सब कुछ मान बैठे हैं और स्वास्थ्य की आवश्यकता नहीं समझते। *—परमपूज्य गुरुदेव*

वासना से प्रेम की यात्रा

मनुष्य जीवन का उद्देश्य नर-पशु से मानव एवं महामानव की सीढ़ियों को पार करते हुए अंततः देवमानव की अवस्था को प्राप्त करना है, जिसमें सर्वसाधारण को वासना, आसक्ति-मोह एवं प्रेम के भावनात्मक सोपानों को पार करते हुए आगे बढ़ना होता है।

भावात्मक विकास-यात्रा के इन क्रमिक सोपानों को भारतीय संस्कृति ने बहुत सुंदर रूप में अपने जीवन दर्शन में समाहित किया है। पुरुषार्थ चतुष्टय से लेकर आश्रम-व्यवस्था इसके लिए निर्मित की गई है। पूज्य गुरुदेव ने इसे 'गृहस्थ एक तपोवन' के रूप में परिभाषित किया है, जो भावनात्मक रूपांतरण की एक विलक्षण प्रयोगशाला है।

व्यावहारिक जीवन में कई इनको एक जैसा मानते हैं तो कई वासना या मोह-आसक्ति को ही प्रेम या प्यार का नाम देकर इसे कलंकित करते रहते हैं। फिल्मों से लेकर आधुनिक मीडिया में इस तरह के घालमेल को देखा जा सकता है, जिसका युवाओं पर बहुत नकारात्मक एवं घातक प्रभाव पड़ता है।

इसी के परिणामस्वरूप कितनी लोमहर्षक घटनाएँ आएदिन तथाकथित प्यार के नाम पर होती रहती हैं। अतः वासना, मोह-आसक्ति और प्रेम के मध्य भेद की समझ आवश्यक है, जिससे गृहस्थ में रहते हुए इनके रूपांतरण की प्रक्रिया को घटित होते देखा जा सके।

वासना यौन इच्छा से जुड़ी जैविक भावना है, जो शारीरिक आकर्षण एवं ऐंद्रियक संतुष्टि के इर्द-गिर्द केंद्रित रहती है। वासना में भावनाएँ तीव्र, लेकिन क्षणभंगुर होती हैं।

अतः वासना प्रायः शारीरिक आकर्षण से प्रेरित होती है और इसमें कोई दीर्घकालिक संबंध नहीं होता। यह प्यार या मोह की अनुपस्थिति में भी हो सकती है। मनोविद् डॉ0 बेंटन के शब्दों में, वासना विशुद्ध रूप से शारीरिक संपर्क की चाहत है। यह काफी हद तक स्वार्थी है और इसमें दूसरे व्यक्ति की भलाई के बारे में बहुत कम सोचा जाता है या परवाह की जाती है।

मोह या आसक्ति किसी व्यक्ति या वस्तु से भावनात्मक रूप से जुड़ाव है। यह लगाव और निर्भरता पर आधारित होती है। आसक्ति में व्यक्ति को उस व्यक्ति या वस्तु की आवश्यकता महसूस होती है और वह उसके बिना स्वयं को अकेला या असुरक्षित अनुभव करता है।

डॉ0 बेंटन के शब्दों में, मोह के साथ, आप दूसरे व्यक्ति को आदर्श मानने लगते हैं और दूसरे व्यक्ति के बारे में बहुत उथली समझ में उलझे रहते हैं। मोह लोगों को एक साथ ला सकता है, लेकिन यह शायद ही कभी लोगों को एक साथ रख पाता हो। मूलतः मोह; वासना और प्रेम के बीच का वह चरण है, जिसे अधिकांश लोग रिश्तों के रूप में अनुभव करते हैं।

प्रेम, इन दोनों से परे एक गहरा, स्थायी और भावनात्मक संबंध है, जो केवल आकर्षण पर आधारित नहीं होता। इसमें देख-भाल, सम्मान, प्रतिबद्धता और विश्वास शामिल होते हैं। प्रेम में व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए खुशी चाहता है और

उसकी भलाई के बारे में चिंतित होता है। यह एक स्थायी और विश्वसनीय संबंध है, जो समय के साथ सुदृढ़ होता है।

यह दूसरों की भलाई और खुशी के बारे में चिंतित रहने की भावना है। यह बे-शर्त प्रेम है, जिसमें किसी भी शर्त या अपेक्षा के बिना दूसरे व्यक्ति को स्वीकार करना शामिल है।

इस तरह वासना, मोह-आसक्ति और प्रेम तीनों अलग-अलग भावनाएँ हैं, जो एकदूसरे से जुड़ी हो सकती हैं, लेकिन वे वस्तुस्थिति में अलग-अलग हैं।

वासना एक तीव्र ऐंद्रिक इच्छा है, मोह-आसक्ति भावनात्मक जुड़ाव है और प्रेम एक गहरा, स्थायी और भावनात्मक संबंध है, जो देख-भाल, सम्मान और प्रतिबद्धता पर आधारित है, जिसमें लगाव, देख-भाल और अंतरंगता के पहलू निहित रहते हैं।

डॉ० बेंटन के अनुसार—प्रेम तब होता है, जब रिश्ता आपसी देख-भाल और समझ से विकसित हो जाता है। इसमें लोग एकदूसरे की भलाई को बढ़ावा देने और रिश्ते को पोषित करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। यह वासना या मोह से कम रोमांचक हो सकता है, लेकिन यह स्थायी रहता है।

परिवार-व्यवस्था में एक सद्‌गृहस्थ के रूप में व्यक्ति यदि विवेकपूर्ण जीवनयापन करता है, तो वह काम, मोह-आसक्ति के क्रमिक भाव-रूपांतरण के साथ प्रेम की अवस्था को प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृति में धर्मयुक्त अर्थ के साथ काम को मोक्ष का कारक माना गया है, इसी आधार पर वासना क्रमिक रूप में मोह-आसक्ति के बंधन को पार करते हुए प्रेम की श्रेणी में रूपांतरित होती है।

यह भारतीय संस्कृति में प्रतिपादित आश्रम-व्यवस्था में गृहस्थ की उर्वर प्रयोगशाला में घटित होता है, जिसे पूज्यवर ने 'गृहस्थ एक तपोवन' की संज्ञा दी है। इसमें संयम, सेवा और साधना की त्रिवेणी में स्नान करते हुए एक सद्‌गृहस्थ वासना, मोह-आसक्ति के अनुभवों को क्रमिक रूप से पार करते हुए प्रेम भाव में स्थिर होता है और मानव जीवन के उद्‌देश्य को परिपूर्ण करता है। ❑

एक गाँव में एक बाबाजी रहा करते थे। वे गाँव के सभी बच्चों की नियमित कक्षाएँ लिया करते थे। एक दिन वे बच्चों को ऊँचे पेड़ पर चढ़ना सिखा रहे थे। गाँव के अन्य निवासी भी उनको प्रशिक्षण देते देख रहे थे। उन्होंने देखा कि बाबाजी बच्चों को चढ़ते समय तो कुछ नहीं कहते, पर उतरते समय हरेक को सँभलकर उतरने को कहते हैं।

लोगों ने उनसे पूछा—"बाबाजी! सबसे कठिन कार्य तो पेड़ पर चढ़ना है, फिर आप उतरते समय सावधान रहने को क्यों कहते हैं?" बाबाजी बोले—"बेटा! चढ़ते समय सबकी एकाग्रता लक्ष्यप्राप्ति की ओर होती है, इसलिए हर कोई सावधान रहता है। लक्ष्य मिलते ही सब ढीले पड़ जाते हैं, इसलिए दुर्घटना ज्यादातर उतरते समय घटती है।"

लोगों की समझ में आया कि यही सिद्धांत जीवन पर भी लागू होता है कि मात्र कार्य में सफलता की प्राप्ति ही नहीं, बल्कि उसको प्राप्त करने के बाद अंतर्मन में संतुलन बनाए रखना भी उतना ही आवश्यक है, नहीं तो सावधानी हटते ही, दुर्घटना घट जाती है।

हिम्मत और हौसले से सब कुछ संभव है

हृदय में भाव, विचारों में सृजनात्मकता एवं कर्मठता हो तो सामान्य व्यक्ति भी असाधारण कार्य कर सकता है। यह असाधारण कार्य वैज्ञानिक आविष्कार के रूप में भी सामने आ सकता है। अपने देश की आम जनता के बीच के ऐसे कुछ लोग हैं जिन्होंने अनुभवजन्य ज्ञान से वह कार्य कर दिखाया, जिसे देखकर कोई भी अचंभित हो सकता है।

इसी के चलते विख्यात पत्रिका 'फोर्ब्स' ने ग्रामीण भारत के सात शक्तिशाली लोगों को अपनी सूची में स्थान दिया था।

ये वे लोग हैं, जिन्होंने किताबी ज्ञान और डिग्री के बजाय अपने अनुभव से आम आदमी की तकलीफों को समझा और उनके दरद को दूर करने में जुट गए। इन्होंने अपनी स्मृतियों को आधार बनाया और भारतीय पुराणों के इस वाक्य को सार्थक कर दिया कि स्मृति को आविष्कार में बदलने वाले ही लोकप्रणेता कहलाते हैं।

ये सातों भारतीय आधुनिक भारत के पुरोधा हैं। पहले विद्वज्जन शहरी जीवन से दूर बिना लाभ-हानि की चिंता किए समाज में ज्ञान के विस्तार के लिए तपस्यारत रहते थे। ठीक वैसे ही इनका काम है। सुदूर गाँवों में अपने कर्म से इन आविष्कारकों ने भारतीय समाज को अपने यंत्रों का वरदान दिया। खास बात यह है कि इस सूची में शामिल तीन के नाम मनसुखभाई हैं।

मनसुखभाई जगनी, मनसुखभाई पटेल, मनसुखभाई प्रजापति, अंशु गुप्ता, रामाजी खोबरागढ़े, मदनलाल कुमाव, चिंताकिंडी मल्लेशाम—ये वो नाम हैं, जिन्होंने काम से अपने नाम को सार्थक किया। इन्होंने ऐसे सवालों के ऐसे जवाब ढूँढ़ निकाले हैं, जो हमारी सोच से परे हैं।

जैसे हममें से ज्यादातर लोग मटके को गरीबों का फ्रिज कहते रहे हैं। बस, इसी शब्द को सिद्ध करते हुए बिना बिजली का फ्रिज सामने आया तो महिलाओं को तवे पर रोटी सेंकते हुए होने वाली परेशानी से फ्राइंग पैन।

गाँवों में अक्सर अमीर लोग गरीबों को व्यंग्य करते हैं। ट्रैक्टर नहीं है, तो मोटरसाइकिल से खेत जोत लो। बस, इसी से प्रेरणा ली और उन्होंने बना दिया मोटरसाइकिल वाला ट्रैक्टर।

राजकोट, गुजरात के मनसुखभाई प्रजापति पारिवारिक पेशे से कुम्हार हैं। पीढ़ियों से मिट्टी के बरतन उनका परिवार बनाता रहा है, पर 'मिट्टी को सोना' करने की कहावत चरितार्थ की मनसुखभाई ने। उन्होंने बिना बिजली का मिट्टी का फ्रिज बनाया। 2001 में गुजरात में आए भूकंप में हजारों लोगों के मटके तक नष्ट हो गए थे।

तब लोगों को उन्होंने कहते सुना इस भूकंप ने गरीबों का फ्रिज तक छीन लिया। बस, यहीं से प्रजापति ने काम शुरू किया और मिट्टीकूल नाम से बिना बिजली का फ्रिज तैयार कर लिया। 2001 से 2004 तक वे इस पर लगातार प्रयोग करते रहे। 2005 में उन्होंने अपनी पत्नी को नॉनस्टिक तवे के लिए परेशान होते देखा।

यह महँगा था, इसलिए वे उसे खरीद नहीं पा रही थीं। इसे देखते हुए प्रजापति ने मिट्टी के पुराने तवे पर कुछ प्रयोग किए और नॉनस्टिक तवा तैयार कर दिया। वो भी मात्र सौ रुपये में। एक दार्शनिक ने कहा था कि आप कौन हैं और कहाँ से आते हैं,

इससे फरक नहीं पड़ता—सभी ईश्वर द्वारा प्रदत्त क्षमता से अपनी पहचान बना सकते हैं।

प्रजापति ने भी एक बार फिर इसे सिद्ध किया कि क्षमतावान को कोई रोक नहीं सकता। जरूरत है अपनी क्षमता को पहचानने की। मनसुखभाई पटेल भी पीछे नहीं रहे। कपास के पूरे बंद और अधखुले फूलों में से कपास निकालना समय लेने वाला और थका देने वाला काम है।

दसवीं तक पढ़े पटेल ने इसे दूर करने के लिए कपास की छँटाई मशीन तैयार की। वे देश के ऐसे पहले ग्रामीण आविष्कारक बने, जिन्हें अमेरिकी पेटेंट भी हासिल हुआ। इसके अलावा उन्होंने कपास की उन्नत तकनीक भी विकसित की। इससे किसानों का मुनाफा बढ़ा। कपास ने हमेशा ही भारत को सम्मान दिलाया है।

जब सिकंदर की फौज यहाँ आई तो सिंधु घाटी की सभ्यता और खेतों में कपास देखकर उन्होंने दाँतों तले उँगली दबा ली थी। वे आश्चर्यचकित थे कि जो ऊन वो भेड़ों से हासिल करते हैं, हिंदुस्तानियों ने उसे खेतों में उगा रखा है।

इसी तरह खेत जोतने की बात आती है तो दो ही दृश्य उभरते हैं। बैल जोड़ी लेकर पसीना बहाता किसान या ट्रैक्टर पर बैठा समृद्ध काश्तकार। इस दृश्य को दिमाग से हटाने का काम किया है गुजरात के ही मनसुखभाई जगनी ने।

जगनी ने मोटरसाइकिल से खेत जोतने का यंत्र तैयार किया है। यह बिलकुल ट्रैक्टर की तरह ही काम करता है। यह दो लीटर ईंधन में आधे घंटे में करीब एक एकड़ जमीन जोत सकता है। जब विदेशों में इसे दिखाया गया तो बहुत कम कीमत के इस ट्रैक्टर को सबने सराहा।

इसे 325 सीसी की मोटरसाइकिल पर बनाया गया है और पिछले हिस्से में दो पहिये लगाए गए, ताकि ट्रैक्टर जैसा काम कर सके। चार साल के लगातार परीक्षण के बाद तैयार इस आविष्कार को नाम दिया गया है—बुलेट हल।

इसी तरह अपनी उँगलियों को दरद देकर लोगों को सुंदर कपड़ा देने वाले बुनकरों की जिंदगी को खूबसूरत बना रहे हैं आंध्र प्रदेश के चिंताकिंडी मल्लेशाम। उनके द्वारा तैयार लक्ष्मी आसू मशीन ने बुनकरों को लूम की खट-खट से मुक्ति दिलाई है। एक साड़ी तैयार करने में पहले बुनकरों को हजारों बार हाथ घुमाना पड़ता था। नई मशीन से उन्हें सिर्फ धागे व्यवस्थित करने होते हैं। पहले बुनकर पूरा दिन काम करके सिर्फ एक धोती बना पाता था। अब इसके माध्यम से दिन में कई धोतियाँ बनाई जा सकती हैं।

खेती, कपड़े के उपकरण बने हैं तो भला कृषि में पीछे कैसे रहा जा सकता है? महाराष्ट्र के

गायत्री अर्थात तत्त्वज्ञान से संबंधित पक्ष। सावित्री अर्थात भौतिक प्रयोजनों में उसका जो उपयोग हो सकता है, उसका प्रकटीकरण।

—परमपूज्य गुरुदेव

रामाजी खोबरागढ़े ने चावल की एक नई प्रजाति विकसित की है। बिना किसी वैज्ञानिक सहायता के रामाजी ने इस पर काम किया। चावल की इस किस्म को एचएमटी नाम दिया गया है।

इस बीज से करीब 80 फीसदी ज्यादा फसल मिल रही है। साथ ही इसका दाना बारीक और खुशबूदार है। देश भर के किसान इस चावल-क्रांति का लाभ ले रहे हैं।

भारत गाँवों का देश है और ग्रामीण ही इस देश का प्राण हैं—इसे एक बार फिर सिद्ध कर रहे हैं हिंदुस्तानी। ये तो वे नाम हैं, जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। ऐसे अनेक प्रतिभावान हैं, जो गुमनाम ढंग से सृजनकार्य करते रहते हैं। उन्हें प्रकाश में लाकर उनके सृजनकार्य से लाभान्वित होने की आवश्यकता है। ❑

लौकिक एवं पारलौकिक लक्ष्यप्राप्ति का साधन गायत्री-साधना

शास्त्रों ने ब्रह्मानंद, परमानंद की प्राप्ति को ही मानव जीवन का परम ध्येय कहा है और मनुष्य शरीर को इसी परमानंद की प्राप्ति का साधन कहा है। दूसरे शब्दों में कहें तो मनुष्य शरीररूपी साधन से परमानंद, ब्रह्मानंदरूपी साध्य की प्राप्ति ही मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य है। अस्तु यह स्पष्ट है कि मनुष्य शरीररूपी दुर्लभ साधन के होते हुए भी जो भगवत्प्राप्तिरूप ब्रह्मानंद, परमानंद की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक प्रयास, पुरुषार्थ, साधना नहीं कर पाते, उनका जीवन व्यर्थ है, निष्फल है, पशुवत् है और उन्हें घोर दु:ख देने वाला है।

ऐसा दुर्लभ साधन सुलभ होने पर भी मनुष्य यदि केवल पेट भरने और निकृष्ट भोग करने की स्थिति में ही पड़ा रहे तो फिर ऐसे पशुवत् जीवन को धिक्कार है। मानव जीवन ही तो वह दुर्लभ अवसर है, जिसमें हम आध्यात्मिक पुरुषार्थ करके सभी प्रकार के दु:खों व बंधनों से मुक्त होकर अपने वास्तविक आत्मस्वरूप को जानकर और भगवत्प्राप्ति रूप परमानंद को पाकर धन्य-धन्य हो सकते हैं और ईश्वर ने इसी महान व परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही तो हमें इस संसार में मनुष्य रूप में भेजा है, पर यदि हम आध्यात्मिक साधना-उपासना में ही लगे रहे तो हम सांसारिक धर्म-कर्म करेंगे कैसे?

हमें जीवन-निर्वाह व भौतिक समृद्धि भी तो चाहिए। फिर भला उसकी प्राप्ति हमें कैसे हो सकेगी? मन में ऐसे प्रश्न भी उठने स्वाभाविक हैं, पर सच तो यह है कि आध्यात्मिक साधना कभी भी हमारी भौतिक समृद्धि, उपलब्धि में बाधक नहीं, बल्कि सहायक ही होती है।

हमें जीवन-निर्वाह के लिए भौतिक साधन-समृद्धि चाहिए, पर जीवन-निर्वाह तो भगवत्प्राप्तिरूप परमानंद की प्राप्ति के लिए ही होना चाहिए पर अध्यात्म, भगवत्प्राप्ति अथवा आध्यात्मिक प्रगति के साथ भौतिक प्रगति के लिए कौन-सी साधना सर्वोपयोगी और सबके लिए सहज व सरल है? यह प्रश्न भी निस्संदेह प्रासंगिक है।

आध्यात्मिक प्रगति के साथ-साथ हमारी भौतिक प्रगति भी हो इस हेतु अनेक आध्यात्मिक साधनाएँ हैं, पर उनमें गायत्री-साधना निस्संदेह सर्वोपरि है। गायत्री-साधना एक ऐसी साधना है, जो हमारे आध्यात्मिक व भौतिक जीवन को सुख-समृद्धि से भर देती है।

आध्यात्मिक साधना का परम लक्ष्य भगवत्प्राप्ति अथवा परमानंद की प्राप्ति है, पर भगवत्प्राप्ति के लिए मन व बुद्धि की पवित्रता परमावश्यक व सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। निरंतर व नियमित गायत्री-साधना से जब साधक की चित्तशुद्धि हो जाती है, बुद्धि पवित्र हो जाती है तब उसके लिए आत्मसाक्षात्कार अथवा भगवत्प्राप्ति का मार्ग स्वत: ही प्रशस्त होता जाता है।

इस संबंध में आचार्य शंकर ने बड़ा सुंदर कहा है कि आत्मसाक्षात्कार अथवा आत्मप्राप्ति करने की दिव्यदृष्टि जिस बुद्धि से प्राप्त होती है, उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा ही होती है। वहीं स्वामी रामतीर्थ ने कहा है कि राम को प्राप्त करना सबसे बड़ा काम है। गायत्री का अभिप्राय बुद्धि को काम-रुचि (अर्थात विषय-भोग से) हटाकर राम-रुचि में लगा देना है। जिसकी बुद्धि

पवित्र होगी, वही राम को अर्थात भगवान को प्राप्त कर सकेगा।

संतप्रवर स्वामी रामतीर्थ के कहने का आशय यह है कि राम को भगवान को पाने के लिए साधक की बुद्धि इतनी पवित्र होनी चाहिए कि वह राम को काम से बढ़कर समझे। निरंतर व नियमित गायत्री-साधना से साधक की बुद्धि में इतनी पवित्रता आ जाती है कि वह राम (भगवान) को काम (सांसारिक व क्षणिक सुख भोग) से बढ़कर समझने लगता है।

गायत्री-साधना से जब साधक की चित्तशुद्धि हो जाती है, बुद्धि पवित्र हो जाती है तब उसे आत्मस्वरूप का बोध होने लगता है, उसे आत्मसाक्षात्कार व भगवत्प्राप्ति के रूप में परमानंद की अनुभूति अपनी आत्मा में होने लगती है। हमारी अभिरुचि भगवान की सगुण साकार उपासना में हो अथवा निर्गुण निराकार उपासना में, दोनों ही स्थिति में गायत्री मंत्रजप महत्त्वपूर्ण है।

आत्मसाक्षात्कार हेतु गायत्री-साधना की महत्ता को स्पष्ट करते हुए स्वामी शिवानंद जी कहते हैं कि ब्राह्ममुहूर्त में गायत्री का जप करने से चित्त शुद्ध होता है और हृदय में निर्मलता आती है। बुद्धि सूक्ष्म होने से दूरदर्शिता बढ़ती है। गायत्री द्वारा दैवी सहायता मिलती है और उसके द्वारा आत्मदर्शन हो सकता है।

भरद्वाज ऋषि का कहना है कि ब्रह्मा आदि देवता भी गायत्री का जप करते हैं; क्योंकि वह ब्रह्मसाक्षात्कार कराने वाली है। वहीं नारद मुनि का स्पष्ट कहना है कि गायत्री, भक्ति का ही स्वरूप है। जहाँ भक्तिरूपी गायत्री है, वहीं भगवान का वास है, वहीं श्रीनारायण का वास है। इसमें कोई संदेह नहीं करना चाहिए।

गायत्री को लेकर ऋषियों, मुनियों की उक्तियों से यह स्पष्ट है कि भगवत्प्राप्ति रूप परमानंद की प्राप्ति में गायत्री-साधना की महत्ता सर्वाधिक है। जैसे सागर की हर बूँद में सागर है, वैसे ही हर जीव की आत्मा में परमात्मा का अंश है, पर आत्मा पर अज्ञान, अविद्या का आवरण चढ़े होने से जीवात्मा को अपने वास्तविक स्वरूप का बोध नहीं हो पाता; क्योंकि जिस प्रकार राख से ढका हुआ अँगार मंद हो जाता है, वैसे ही आंतरिक मलिनताओं के कारण आत्मतेज कुंठित हो जाता है।

गायत्री-साधना से आत्मा पर चढ़े हुए मलिनता के आवरण मिटने लगते हैं और जैसे राख हटा देने से अंगार अपने प्रज्वलित स्वरूप में दिखाई पड़ने लगता है, वैसे ही साधक की आत्मा ब्रह्मतेज के साथ प्रकट होती है। योगियों को जो लाभ दीर्घकाल तक कष्टसाध्य तपस्याएँ करने से प्राप्त होता है, वही लाभ गायत्रीसाधकों को स्वल्प प्रयास में गायत्री-साधना-उपासना के द्वारा प्राप्त हो जाता है।

गायत्री-उपासना का यह प्रभाव प्राचीनकाल के ऋषियों से लेकर आधुनिक युग के अगणित ऋषियों के जीवन में समय-समय पर दृष्टिगोचर होता रहता है। युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव का स्पष्ट मत है कि आत्मकल्याण, आत्मसाक्षात्कार, भगवत्प्राप्ति के लिए गायत्री-साधना से अधिक सुगम मार्ग दूसरा कोई नहीं है। अब प्रश्न यह उठता है कि भगवत्प्राप्ति के अतिरिक्त भौतिक सुख-समृद्धि में भी गायत्री-साधना क्यों और कैसे महत्त्वपूर्ण है?

वस्तुतः भौतिक क्षेत्र में समृद्धि-सफलता के लिए भी सद्बुद्धि व सद्गुणों की बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। गायत्री-साधना से बुद्धि पवित्र होते ही साधक में दूरदर्शिता आती है, जिससे वह जीवन में सही समय पर सही निर्णय ले पाता है। वह गायत्री-साधना के फलस्वरूप सद्बुद्धिसंपन्न होने से सदैव सन्मार्ग पर चलता है, शुभ कर्म करता

है और बुरे कर्मों से दूर रहता है, जिससे वह शुभ कर्मों के परिणामस्वरूप सुख पाता है।

गायत्री-साधना से उसके प्रारब्ध कर्मों का क्षय होता है, जिससे जीवन में भौतिक प्रगति में आ रही बाधाएँ भी दूर हो जाती हैं और उसे जीवन-व्यापार में सफलता मिलती है।

सद्‌गुणों की वृद्धि होने से साधक के आहार-विहार, दिनचर्या, दृष्टिकोण, स्वभाव एवं कार्यक्रम में परिवर्तन होता है। जीवन में यह परिवर्तन ही आपत्तियों के निवारण और भौतिक सुख-समृद्धि का कारण बन जाता है।

मनोबल, आत्मबल में वृद्धि होने से वह श्रम, पुरुषार्थ में संलग्न रहता है। वह विपरीत परिस्थितियों में भी साहस, उमंग, धैर्य बनाए रखता है। वह आलस्य, प्रमाद, अकर्मण्यता से दूर रहकर समय का सदुपयोग कर जीवन के हर क्षेत्र में सफल होता है।

तभी तो महर्षि रमण ने कहा है कि गायत्री मंत्र में अद्‌भुत शक्ति है। गायत्री ऐसा मंत्र है, जिससे आध्यात्मिक और भौतिक—दोनों प्रकार के लाभ मिलते हैं। वहीं स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि गायत्री, साधक को सद्‌बुद्धि प्रदान करती है। सद्‌बुद्धि से साधक की सन्मार्ग पर प्रगति होती है और सत्कर्म से सब प्रकार के सुख मिलते हैं और जो सत् की ओर बढ़ रहा है, उसे किसी प्रकार के सुख की कमी नहीं रहती। इस प्रकार हम देखते हैं कि भगवत्प्राप्ति व भौतिक सुख-समृद्धि के लिए भी गायत्री-साधना जरूरी है। ❑

देशमान्य गोपालकृष्ण गोखले बाल्यकाल में बहुत गरीब थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा किसी प्रकार पूर्ण हो गई थी। जब कॉलेज की खरचीली पढ़ाई का प्रश्न सामने आया तो गोखले चिंतित हो गए। तब उनकी भाभी ने अपने आभूषण बेचकर उनकी फीस भरी।

उनके बड़े भाई गोविंद राम अपने पंद्रह रुपये के मासिक वेतन में से सात रुपये गोखले जी को भेज देते थे और शेष आठ रुपयों से अपना खरच चलाते थे। शिक्षा पूर्ण होने पर गोखले जी को पैंतीस रुपये मासिक की नौकरी मिल गई।

बड़े भाई के उपकार से उनका रोम-रोम कृतज्ञ था, इसलिए वे ग्यारह रुपये अपने पास रखकर चौबीस रुपये प्रतिमाह अपने भाई को भेज देते थे।

उनके भाई ने उन्हें ऐसा करने से बहुत मना किया तो वे बोले—"भाई साहब! यह रुपयों का बदला रुपयों से नहीं है, बल्कि ममता का उत्तर श्रद्धा से है।" उनके भाई ने उन्हें गले लगा लिया।

ध्यान का द्वार है संगीत

बाँसुरी बजाते हुए श्रीकृष्ण, वीणा के तार झंकृत करती हुई सरस्वती और डमरू पर नृत्य करते भगवान शंकर—ये एक दिव्य एवं ज्वलंत प्रतीक हैं। यहीं से उत्पन्न हुआ है भारतीय शास्त्रीय संगीत और नृत्य। नृत्य-संगीत की सहायता से ध्यान भी लगाया जाता है।

वैदिककाल में संगीत और नृत्य से कई रोगों का उपचार किया जाता था। नृत्य शारीरिक और संगीत मानसिक रोगों का उपचार करता था। आज ये चिकित्सा-विधियाँ संगीत चिकित्सा और नृत्य चिकित्सा के नाम से प्रचलित हैं।

विज्ञान कहता है कि दिन भर में मनुष्य के मन में लगभग 70 हजार विचार आ सकते हैं। इसलिए हमें अपने विचार यानी मन पर नियंत्रण रखना चाहिए। इसका एकमात्र माध्यम है—अष्टांग योग का सातवाँ अंग—ध्यान।

प्राचीन ऋषि-मुनियों ने ध्यान की कई विधियाँ बताई हैं, जैसे ऊर्जा पाने के लिए सूर्य ध्यान, मानसिक शांति के लिए चंद्र ध्यान, विचारों पर नियंत्रण के लिए संख्या ध्यान, आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए स्थूल ध्यान, शरीर में स्थित चक्रों को जगाने के लिए कुंडलिनी ध्यान। यदि ध्यान की इन सभी विधियों के साथ भारतीय नृत्य और संगीत को भी शामिल कर लिया जाए, तो इसका परिणाम दुगना हो सकता है।

राग की शक्ति अद्भुत है। राग 'रंज' शब्द से बना है, जिसका अर्थ होता है मस्तिष्क को आनंदित करना। यह मन की भावनाओं को बाहर लाता है। 'संगीत रत्नाकर' में सारंगदेव कहते हैं कि राग सुंदर स्वर लहरी है, जो सुनने वालों को आनंद विभोर कर देती है। 'वृहद्देशी' में मतंग मुनि कहते हैं कि राग हमारे मस्तिष्क को तरंगित करता है।

राग को पहले उत्पत्ति स्थान या जनजाति के नाम से जाना जाता था। जैसे—जौनपुरी, मुल्तानी (स्थान के नाम पर), अहीरी, गुर्जरी (जाति के नाम पर), भैरव, दुर्गा, सरस्वती (हिंदू देवी-देवताओं के नाम पर), मियाँ मल्हार, चर्जु की मल्हार (राग बनाने वाले के नाम पर), जिलफ, शाहन (इसलाम से प्रेरित) आदि।

15वीं शताब्दी के बाद कई देशों की संस्कृतियों के प्रभाव से इसके स्वरूप में काफी बदलाव आया है, लेकिन आज भी यह हमारे मस्तिष्क को ध्यान की मुद्रा में ले जाने में सक्षम है।

सुबह के समय जब हम भैरव, अहीर भैरव, नट भैरव, गुर्जरी तोड़ी, मियाँ की तोड़ी राग सुनते हैं तो पहले चरण में यह हमारे अंदर की भावनाओं, विचारों को बाहर लाता है, दूसरे चरण में यह मन को एकाग्रचित्त करता है।

शाम को ध्यान लगाने के समय राग देश, यमन, विहाग, मारु विहाग, पूरियाधनाश्री सुनना चाहिए। शरीर के विभिन्न अंग और मन की स्थितियों पर इनका अलग-अलग प्रभाव पड़ता है।

शास्त्रीय नृत्य का प्रभाव स्पष्ट करते हुए संगीत-विशारद कहते हैं कि कलियुग के लोगों के लिए ब्रह्मा ने पाँचवें वेद की रचना की, जिसका नाम दिया 'नाट्यवेद'। उन्होंने उसे भरत मुनि को सौंप दिया। भरत मुनि ने इसके आधार पर 'नाट्यशास्त्र' लिखा।

मान्यता है कि भारत के सभी शास्त्रीय नृत्य इसी शास्त्र पर आधारित हैं। भगवान शिव का एक नाम नटराज भी है। धर्मकथाओं के अनुसार, भगवान शिव अपने मन को एकाग्रचित्त करने के लिए नृत्य करते थे। मूर्तियों, चित्रों में हम श्रीकृष्ण के हाथ में बाँसुरी, तो सरस्वती के हाथ में वीणा को सहज ही देख सकते हैं।

वैदिक दर्शन के अनुसार, हमारे अंदर अपार शक्ति छिपी हुई है, जो किसी भी रोग से लड़ने में सक्षम है। सुषुप्तावस्था में पड़ी इन शक्तियों को सक्रिय भी किया जा सकता है।

जब हम भरतनाट्यम, कथक, कुचिपुड़ी आदि जैसे शास्त्रीय नृत्य करते हैं तो अलग-अलग शारीरिक भाव-भंगिमाएँ न केवल हमारे अंदर की शक्ति को जगाती हैं, बल्कि हमारा ध्यान भी केंद्रित करती हैं। ❑

राजा भोज ने युद्ध में विजय के उपलक्ष्य में सारे नगर को भोज दिया। नाना प्रकार के व्यंजन इसमें बनाए व परोसे गए। खाने वालों ने राजा भोज की उदारता की भूरि-भूरि प्रशंसा की। अपनी प्रशंसा सुनकर राजा भोज का सिर अहंकार से ऊपर उठ गया और अधिक प्रशंसा सुनने के उद्देश्य से वे नगर-भ्रमण को निकले।

रास्ते में उन्हें एक लकड़हारा मिला, जो अपने कंधे पर लकड़ियों का बड़ा गट्ठर उठाए चला आ रहा था। राजा भोज ने उसे रोककर पूछा—"क्यों भाई! आज के दिन तो राजा ने बड़ा भोज दिया था, फिर इतनी ज्यादा मेहनत किसलिए कर रहे हो ? क्या तुम्हें भोज का आमंत्रण नहीं मिला था।"

लकड़हारा बोला—"मुझे भोज के विषय में पता था, पर यदि बिना परिश्रम के खाने की आदत पड़ गई तो जीवन भर ऐसे ही भोजों की प्रतीक्षा करता रहूँगा। आत्मगौरव अपने परिश्रम का खाने में ही है, दूसरों की प्रदत्त सहायता में नहीं।"

राजा भोज का अहंकार यह सुन विगलित हो गया, पर साथ ही उन्हें गर्वानुभूति भी हुई कि उनके राज्य में इतने नैष्ठिक नागरिक भी निवास करते हैं।

एक ही वृत्ति, एक ही माया, सब जग एक ही परमात्म समाया

अध्यात्म के मार्ग कर चलते हुए हमारी एक ही वृत्ति होनी चाहिए, उसका नाम है त्याग-वृत्ति। यह उस दृष्टिकोण से जन्मती है, जिसमें कि कोई भी विचार-वस्तु हमें अपने दिव्य वैभव से विलग नहीं कर सकती। हम सदा अपनी एक ही वृत्ति में स्थापित रहते हैं, उसका नाम है परमात्म-वृत्ति। यह एक ऐसी वृत्ति है, जिसकी उत्पत्ति पर सारा संसार हमें अपनी आत्मा का ही प्रकट स्वरूप दिखाई पड़ता है।

दूसरी चीज है माया। प्रश्न उठता है कि यह माया क्या है? इसका उत्तर है अपने अहंकार का विस्तृत होना एवं जो कुछ भी हमें इस जगत् से बाँधे हुए है मात्र उसकी अनुभूति होना। माया अपने आप में बुरी नहीं, बुरा तो उसे आदमी का दृष्टिकोण बनाता है। जिसने यह समझ लिया कि यह संसार विषयों की तृप्ति के लिए नहीं, बल्कि आत्मविसर्जन के लिए है, वह फिर अपनी वृत्ति का उपयोग भी सही तरह से करेगा एवं उसे दुःख भी न होगा।

अध्यात्म इतना ही नहीं है, इससे आगे वह है अपने चरित्र की साधना करना, उसे विकसित बनाना। जो यह कर सके, उसे ईश्वर की विशेष कृपा प्राप्त होती है, वह यह कि उसका अहंकार स्वयं ही परमात्मा में विगलित हो जाता है।

जब हम ईश्वर को प्रत्यक्ष कर लेते हैं एवं उसे सत्प्रयोजनों के निमित्त लगाने की ठानते हैं तो इसे ही परमात्म-लाभ कहते हैं, जो कि इस संसार में सबसे बड़ा उपहार है। अपने अहंकार की आपूर्ति संभव नहीं तो क्यों न ऐसा कर लें कि अपनी वृत्ति को उस ईश्वर को सौंप दें एवं संसार को परमात्मा का घर बना दें।

ऐसा कर लेंगे तो फिर विचार-व्यवहार डगमगाएगा नहीं। यह तो मनुष्य की क्षुद्रता है कि वह सांसारिक परिस्थितियों के मध्य अपना सिर झुकाए रहता है। जिसके पास परमात्मा का अनुग्रह है, वह सदा अपने 'स्व' में स्थिर एवं एकत्व-बोध को धारण किए भ्रमण करता है। यही उसकी पहचान है एवं इसी के लिए उसका जीवन होता है। हम तब तक अपनी बाधाओं से पार नहीं जा सकते, जब तक कि भीतर एकत्व का उजाला एवं प्रेम का महासागर जन्म नहीं ले लेता।

इसे ही साधना कहते हैं एवं यह प्रत्येक व्यक्ति के स्वरूप के अनुसार उसकी अपनी-अपनी हो सकती है। इसमें तब तक व्यवधान नहीं पड़ता, जब तक कि हम संसार को ही अपना सब कुछ न सौंप दें और सांसारिक कामनाओं को ही अपना जीवन ध्येय न मान बैठें। उसे अपनी वृत्ति न सौंप दें, उसे ही सब कुछ न मान लें। यह जीवन हमें परमात्मा से मिलने के लिए मिला है, हम बेकार में क्यों इसे व्यर्थ के प्रयोजनों में, क्षुद्र अहंकार की पूर्ति में एवं संसार के मध्य भटकते रहने में लगाते हैं।

जब हमें पता है कि इस वृत्ति का अंत होना है, वृत्ति को ईश्वर में लीन एवं ईश्वर या परमात्मा के सदृश बन जाना है, फिर हमें क्यों संकोच होता है इस संसार में ठीक प्रकार अपनी गतिविधि अपनाने में? हम ईश्वर की सर्वोच्च सत्ता को क्यों नहीं स्वीकारते, उसे ही अपना मित्र बना जीवन की परिस्थितियों से क्यों नहीं गुजरते? इसीलिए हमने अपना अहंकार नहीं गलाया, प्रेम की अमृत-बूँदें

नहीं पीं एवं जीवन को सुख-सौभाग्य की दिशा में नहीं बढ़ा पाए।

ऐसा करते तो परमानंद की यात्रा पर होते, परंतु हममें से अधिकांश का जीवन इस समय संसार के कोलाहल के मध्य खोया पड़ा है। उसे जागना है तो परमात्मा एवं ईश्वर से साहचर्य स्थापित करना होगा, जीवन की मूल वृत्ति को अपने नियंत्रण में ले उसे ईश्वरप्राप्ति के कल्याणकारी मार्ग पर लेकर चलना होगा। यही वस्तुतः अध्यात्म का पथ है। ❑

एक व्यक्ति एक संत से बहस करने लगा कि भगवान सबको समान रूप से अनुदान क्यों नहीं देते, कुछ को ज्यादा और कुछ को कम क्यों मिलता है?

संत ने उस समय उस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया, पर सायंकाल उन्होंने एक मूर्ख व्यक्ति को बुलाकर कहा कि उस व्यक्ति के घर जाओ और उससे 100 स्वर्णमुद्राएँ माँगकर लाओ। वह मूर्ख व्यक्ति गया तो उस व्यक्ति न उसे डाँट-डपटकर वापस भेज दिया। अगले दिन सुबह वह संत गए तो उस व्यक्ति ने तुरंत तिजोरी खोली और उन्हें देने के लिए मुद्राएँ, गिनने लगा।

संत ने पूछा—"बेटा! जब वह दूसरा व्यक्ति आया तो तुमने उसे देने में आना-कानी की, तो मेरे आने पर इतनी सहजता से क्यों मुद्राएँ दे रहे हो?"

वह व्यक्ति बोला—"अरे उस मूर्ख के हाथ में इतनी कीमती मुद्राएँ कैसे दे दूँ?" संत बोले—"बेटा! जब तुम्हें थोड़ी-सी मुद्राओं के लिए इतनी सोच है तो भगवान अपनी कीमती विभूतियाँ बिना व्यक्तियों की पात्रताएँ जाँचे कैसे दे सकते हैं? अनुदानों को मिलने का अधिकार भी तो पात्रता के अनुसार ही तय होना चाहिए।"

आदतों को कुछ ऐसे सुधारें

बार-बार किसी कार्य या व्यवहार को दोहराने से चित्त में अंकित होने वाली आवृत्तियाँ आदतें बन जाती हैं, जो अच्छी भी हो सकती हैं और बुरी भी। एक बार स्थापित होने के बाद फिर आदतें अचेतन मन का हिस्सा बनती हैं और स्वचालित रूप से सक्रिय होकर व्यवहार व जीवन को प्रभावित करती हैं।

अच्छी आदतें जहाँ व्यक्ति को सुख, समृद्धि एवं उत्कर्ष के मार्ग पर प्रवृत्त करती हैं तो वहीं बिगड़ी आदतें व्यक्ति के पतन-पराभव एवं अधोगति का कारण बनती हैं। निस्संदेह रूप में आदत एक दिन में नहीं बनती। नित्य के छोटे-छोटे कृत्य क्रमिक रूप में आदतों का निर्माण करते हैं।

एक छोटा-सा कर्म का धागा धीरे-धीरे एक आदतरूपी मजबूत रस्सी बन जाता है, जो फिर कालक्रम में नागपाश बनकर व्यक्ति के लिए संकट का कारण बनता है। अत: समय रहते किसी भी आदत को तोड़ना व सुधारना आवश्यक हो जाता है, इससे पहले कि वह एक लत बनकर जीवन की बरबादी का कारण बने।

आदत को बदलने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है, आदत से होने वाली हानि व इसके दुष्परिणामों का एहसास और इसे बदलने की तीव्र इच्छा। यदि अपनी आदत से अनभिज्ञता की स्थिति बनी रहे या इससे मोह पाल लिया जाए, तो फिर इसके सुधार का प्रश्न ही नहीं उठता। जब इनके सुधार का संकल्प जगे, तो फिर बुरी आदत को चिह्नित कर इसे अच्छी आदत में बदलने का प्रयास प्रारंभ करें। नियमित रूप से प्रयास-पुरुषार्थ करने पर आदत का बदलना सुनिश्चित होता है।

हालाँकि हर आदत का रूपांतरण समयसाध्य होता है। आदतों को बदलने में निम्न चरणों से गुजरना होता है। सबसे पहले उन संकेतों को पहचानें, जो आदत को उत्प्रेरित करते हों। ये तनाव, उबाऊपन से लेकर अमुक व्यक्ति, परिस्थिति या दिन का समय आदि कुछ भी हो सकते हैं।

इस तरह उन उत्प्रेरक व्यक्ति, समय, स्थान या भाव को चिह्नित करें, इसके उपरांत आदत बदलने का कार्य सरल हो जाता है। अब आदत को उत्प्रेरित करने वाले प्रलोभन या परिस्थिति से बचें और इसके प्रवाह को बाधित करें।

मान लें कि किसी को मोबाइल के अत्यधिक उपयोग की आदत पड़ गई है, तो उसे उसकी पहुँच से दूर रखें या संबंधित एप को मोबाइल से हटा दें। जो देखना हो, उसे समय सीमा में डेस्कटॉप पर देखने तक सीमित रखें।

चाय की लत है, तो उसकी आवृत्ति को कम कर दें या दिन में दो ही बार चाय पिएँगे, ऐसा समय भी निर्धारित कर सकते हैं।

इसका अगला चरण है, आदत का इसके श्रेष्ठतम विकल्प के साथ स्थानांतरण। जब भी तलब उठे तो उसके श्रेष्ठ विकल्प को लागू किया जा सकता है। चाय की जगह प्रज्ञापेय या जड़ी-बूटी का काढ़ा पी सकते हैं। मोबाइल में अपने कार्य संबंधी उपलब्ध उपयोगी कार्यक्रम देख सकते हैं।

यह चरण आदत के नकारात्मक भाव या पहलू के स्थान पर सकारात्मक पक्ष के स्थानांतरण

का है, जिससे पुरानी आदत के साथ खोदी खाई को पाटने की व्यवस्था साकार हो सके।

आदत को बदलने में समय लग सकता है, अतः धैर्य के साथ इस कार्य में लगे रहें, जब तक कि नई आदत स्थापित न हो जाए। आदत बदलने की प्रक्रिया में कुछ सावधानियाँ बरतना आवश्यक है।

आदत बदलने के संदर्भ में व्यावहारिक लक्ष्य को निर्धारित करें, जिसे समय सीमा के अंदर धरातल पर उतारा जा सके। इसे सरल रखें, जिससे कि छोटे-छोटे कदमों के साथ क्रमिक रूप से आगे बढ़ा जा सके।

इस तरह छोटे-छोटे सुधार के साथ छोटे-छोटे संकल्प पूर्ण होंगे और बड़े कदमों को उठाने का विश्वास एवं साहस जगेगा और आदत में बड़े सुधार संभव होंगे।

आदत बदलने के संदर्भ में कुछ सहायक तत्त्वों पर भी ध्यान दिया जा सकता है। जैसे अपने वातावरण में वांछित परिवर्तन किया जा सकता है, जिससे कि पुरानी आदत को जड़ जमाने में कठिनाई हो तथा नई आदत को स्थापित करने में आसानी हो।

साधना संबंधी दिनचर्या बनाने के लिए किसी तीर्थस्थल या शांतिकुज की तपःसिक्त भूमि पर अनुष्ठान में भागीदारी की जा सकती है, जिससे कि नैष्ठिक दिनचर्या जीवन का अंग बन सके। लक्ष्य प्राप्ति पर छोटा-सा पुरस्कार कार्य को सरल बनाता है।

अतः वांछित लक्ष्य प्राप्त होने पर स्वयं को पुरस्कृत करें। आदत सुधार में किसी मित्र, परिवार या किसी परिचित संबंधी का सहारा भी लिया जा सकता है, जो इस दिशा में कार्य करने का इच्छुक हो या इस पर कार्य कर चुका हो। उनसे सहायता माँगने की व्यवस्था की जा सकती है।

आदत बदलने में धैर्य और अध्यवसाय सबसे महत्त्वपूर्ण हैं। अतः अपने कार्य में डटे रहें, लगे रहें और अपने व्यवहार की समीक्षा करते रहें।

आदतों की पुनरावृत्ति का लेखा-जोखा करें। इससे परिवर्तन के व्यावहारिक स्वरूप को लागू करने में सहायता मिलेगी। दिन भर क्रिया करने के साथ अपने विचारों एवं भावों के प्रति भी जागरूक रहें।

डायरी में अपनी प्रगति का लेखा-जोखा रखें। इस कार्य में विघ्न-बाधाओं के लिए भी तैयार रहें, जो कि इस मार्ग में स्वाभाविक हैं। आखिर दशकों की बनाई आदतों की कुछ दिन व सप्ताह में बदलने की आशा नहीं की जा सकती। इसमें कुछ माह से लेकर वर्ष लग सकते हैं। अतः धैर्य रखें और स्वयं के प्रति करुणा का भाव भी।

खिलाड़ी भावना के साथ आदत बदलने के समर में उतरें और मानसिक रूप से तैयारी के साथ इस महान कार्य में जुटे रहें। पुरातन मान्यताओं के अनुसार आदत को बदलने में 3 सप्ताह लगते हैं, लेकिन नई शोधों से स्पष्ट हुआ है कि इसमें 18 दिन से 254 दिन लग सकते हैं और इसका औसत 66 दिन का रहता है।

यह सब आदत की सरलता या जटिलता पर निर्भर करता है कि आदत कब से रही है और व्यक्ति की त्वरा व आदत को बदलने की प्रेरणा किस स्तर की है, यह भी माने रखता है। इसमें आत्मिक दृष्टि का सहारा लिया जा सकता है, मानसिक कल्पना द्वारा आदत बनने की सफलता व इसके सत्परिणामों का मानसिक चित्र बनाया जा सकता है। ऐसे में आदत बदलने की प्रक्रिया और तीव्र हो जाती है।

कुल मिलाकर व्यक्ति जिस पल ठान ले, उसी पल से जड़ जमाई आदत को उखाड़ने व सुधारने की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। कार्य समयसाध्य अवश्य रहता है, लेकिन संकल्पित पुरुषार्थ एवं एकनिष्ठ प्रयास के आधार पर पुरानी आदत से छुटकारा पाया जा सकता है और श्रेष्ठ आदत का बीजारोपण किया जा सकता है। ❑

सात्त्विक आहार-विहार अपनाएँ

स्वास्थ्य सबसे बड़ी संपदा है, परंतु हम सबसे ज्यादा इसी को नष्ट करने का प्रयास करते हैं। उम्र बढ़ने के साथ शरीर में कुछ बदलाव आते ही हैं। उन्हें रोका नहीं जा सकता है। परेशानी तब होती है, जब उम्र से पहले ही बुढ़ापा दिखने लगता है। ज्यादातर मामलों में हमारी खराब आदतें, अस्वस्थ जीवनशैली और सोच इसकी वजह होते हैं। जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, शरीर के भीतर और बाहर बदलाव आने लगते हैं, पर कुछ लोगों में यह बदलाव अधिक तीव्र होते हैं, जिसे पूर्व-वृद्धावस्था या प्री-एजिंग कहते हैं।

प्री-एजिंग की पहचान कई लक्षणों से की जा सकती है। जिनमें से प्रमुख हैं—उम्र बढ़ने के साथ बालों की जड़ों का कमजोर होना। बाल झड़ना सामान्य घटना है, लेकिन कई लोग युवावस्था में ही गंजेपन के शिकार हो जाते हैं। अत्यधिक बाल झड़ने की समस्या को गंजापन या एलोपेसिया कहते हैं। यह इस बात का संकेत है कि आपके शरीर के साथ कुछ गलत हो रहा है। मानसिक और शारीरिक तनाव, आनुवांशिक कारण और पोषक भोजन की कमी बालों के झड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

झुर्रियाँ पड़ने के लिए बाहरी और आंतरिक, दोनों तरह के कारक जिम्मेदार होते हैं। उम्र बढ़ने के कारण शरीर नमी को रोक नहीं पाता तथा इलास्टिन और नई कोशिकाओं का उत्पादन कम हो जाता है, जिससे त्वचा का लचीलापन खतम हो जाता है, वह कठोर हो जाती है। बाह्य कारकों में जीवनशैली, पर्यावरण और प्रदूषण भी त्वचा पर असर डालते हैं।

जो लोग बहुत धूम्रपान करते हैं और व्यायाम नहीं करते, उनकी त्वचा पर प्रभाव जल्दी नजर आने लगते हैं। धूम्रपान करने वालों की त्वचा, न करने वालों की तुलना में 40 फीसदी अधिक पतली होती है। जितना ध्यान हम चेहरे की सुंदरता पर देते हैं, उतना हाथों की नहीं। कितनी ही बार हमारे हाथ चेहरे से ज्यादा जल्दी बूढ़े दिखने लगते हैं।

एक व्यक्ति दिन में औसतन 7-8 बार हाथ धोता है। जितनी बार हमारे हाथ पानी के संपर्क में आते हैं, वे अपनी नमी खोते हैं। इसकी वजह से जल्दी ही हाथों की त्वचा कठोर, खुरदरी और झुर्रीदार हो जाती है। कई लोगों के हाथों पर काले धब्बे उभरने की समस्या भी उभर आती है।

कमर का घेरा बढ़ने से न केवल शारीरिक सुंदरता पर असर पड़ता है, बल्कि सेहत पर भी इसके कई दुष्प्रभाव देखने को मिलते हैं। कमर के घेरे में हर 1 इंच की बढ़ोत्तरी के साथ टाइप 2 डायबिटीज, हृदय रोग और कई तरह के कैंसर होने का खतरा बढ़ता जाता है। अगर हम अपनी कमर को बढ़ने से बचाना चाहते हैं तो खान-पान पर नियंत्रण रखने के साथ ही नियमित रूप से योग और व्यायाम भी करने चाहिए।

पूरी नींद लेना और तनाव से दूर रहना भी जरूरी है। अगर हम पूरी नींद ले रहे हैं, पोषक भोजन का सेवन कर रहे हैं, फिर भी आँखों के नीचे काले घेरे हैं तो यह किसी स्वास्थ्य समस्या का संकेत हो सकता है। उम्र बढ़ने के साथ काला घेरा होना सामान्य है, पर कम उम्र से ऐसा है तो ध्यान देने की जरूरत है। नींद की कमी, थकान,

घंटों तक कंप्यूटर स्क्रीन को घूरने और पानी की कमी के कारण भी ऐसा होता है।

उम्र बढ़ने के साथ मांसपेशियाँ कमजोर होती ही हैं, पर कम उम्र में थकान, थाइरायड, रक्तचाप में अनियमितता और कई मनोवैज्ञानिक कारणों से भी होती है। ऊर्जा का स्तर कम होने से सक्रियता घटने लगती है।

तनाव से शरीर में परिवर्तन आते हैं और यह बुढ़ापे की प्रक्रिया को तीव्र कर देते हैं। तनाव शरीर के विभिन्न अंगों और तंत्रों को प्रभावित करता है।

लंबे समय तक तनाव रहने पर इसका असर बाहरी शरीर पर भी दिखने लगता है। साथ ही अवसाद, मधुमेह, बालों का झड़ना, हृदय रोग, मोटापा, अल्सर आदि की समस्या तक हो सकती है। ऐसे में त्वचा अतिसंवेदनशील हो जाती है और इस पर झुर्रियाँ आने लगती हैं।

एक वयस्क व्यक्ति के लिए 6-8 घंटे की नींद जरूरी है। अनिद्रा से प्रतिरोधक तंत्र कमजोर होता है, जिससे संक्रमण और रोगों की चपेट में आने की आशंका भी बढ़ जाती है।

नींद की कमी से पाचन तंत्र ठीक ढंग से काम नहीं करता है, जिससे संपूर्ण सेहत पर असर पड़ता है। नींद की कमी से त्वचा अपनी चमक और कसावट खो देती है एवं थकी और बूढ़ी दिखाई देती है।

गलत खान-पान हमारे पाचन तंत्र पर बुरा असर डालता है, जिससे शरीर में पूर्व-वृद्धावस्था की प्रक्रिया तेज हो जाती है। मैदा, चीनी, नमक और अत्यधिक वसायुक्त भोजन का सेवन करने से न केवल हमारा स्वास्थ्य खराब होता है, बल्कि हम उम्र में भी बड़े दिखने लगते हैं।

मांस-मछली, पनीर, वसायुक्त दूध और क्रीम में अत्यधिक मात्रा में सैचुरेटेड फैट होता है,जिससे धमनियाँ बंद हो सकती हैं।

साथ ही सैचुरेटेड वसायुक्त चीजें (रेड मीट, क्रीम, मक्खन, पनीर, फुलक्रीम दूध, डार्क चॉकलेट, मेयोनीज व अधिक तली-भुनी चीजें) ठीक से नहीं पचती हैं और मोटापा बढ़ाती हैं।

शोध अध्ययन बताते हैं कि अधिकतर स्वास्थ्य-समस्याओं का कारण लंबे समय तक एक जगह बैठे रहना और शारीरिक गतिविधियों की कमी है। निष्क्रिय जीवनशैली के कारण मेटाबॉलिज्म धीमा हो जाता है।

एंजाइम्स, जो बुरी वसा को धमनियों से मांसपेशियों तक लाते हैं, जहाँ उनकी खपत होती है, धीमे हो जाते हैं और शरीर के निचले भाग की मांसपेशियाँ कम काम करने लगती हैं।

शारीरिक रूप से सक्रिय न रहना—टाइप 2 डायबिटीज, हृदय रोग, कैंसर, पूर्व-वृद्धावस्था और समय से पूर्व मृत्यु होने की आशंका को बढ़ा देता है।

अनुसंधान कहते हैं कि जो लोग लगातार बीस वर्षों तक धूम्रपान करते हैं, उनमें जैविक उम्र अपने हमउम्र लोगों से दुगनी होती है। साथ ही धूम्रपान के कारण कैंसर, हृदय रोगों, अस्थमा और मधुमेह का खतरा बढ़ जाता है। इसके कारण त्वचा की रक्तवाहिकाएँ सँकरी हो जाती हैं।

अधिक शराब सेवन करने से शरीर में पानी की कमी हो जाती है और कैल्सियम ग्रहण करने की क्षमता भी कम हो जाती है। इस कारण त्वचा और हड्डियाँ बूढ़ी और कमजोर होती जाती हैं। त्वचा पर थकावट भी दिखने लगती है।

जीवन का उद्देश्य है—स्वस्थ शरीर और प्रसन्न मन। स्वस्थ शरीर हेतु अपने अनुकूल आहार-विहार का ध्यान रखना चाहिए।

स्वस्थ शरीर में ही प्रसन्न मन की संभावना होती है। सात्त्विक आहार एवं स्वाध्याय ही स्वस्थ शरीर एवं प्रसन्न मन का आधार हैं। अतः हमें इसका पालन करना चाहिए। ❑

मानवीय चेतना का पतन

यदि हम एक बात समझ लें तो हमारे जीवन की अधिकांश समस्याओं का समाधान हो जाएगा। वह है—अपनी चेतना को पूर्ण परिष्कृत करने की नीति, जिसके द्वारा मनुष्य अपने दिव्य वैभव को उजागर कर सके एवं इस संसार में शांति-सद्भाव की दिशा में बढ़े। उसे यह समझना होगा कि मेरे पतन का कारण कहीं बाहर नहीं है, बल्कि मेरे भीतर ही चेतना के अंधकार के रूप में विद्यमान है। आप उसे प्रकाशित करिए, फिर देखिए कि जीवन कैसे निश्चिंततापूर्वक व्यतीत होता है।

मानव चेतना की गहन-से-गहन समस्या अपने स्वरूप से परिचित न हो पाने की है एवं उसकी ही फलश्रुति है समाज में अज्ञान और अराजकता का बढ़ते जाना। आप इसे कैसे रोकेंगे? हमारा देश जनसंख्या की दृष्टि से दुनिया का सबसे बड़ा देश बन चुका है।

हम और कुछ न भी करें, परंतु यदि नागरिकों को सही शिक्षा दे दें तो अधिकांश समस्याओं का हल हो जाएगा। जितनी गरीबी दिखती है, वह न रहेगी; जितनी आपराधिक घटनाएँ हो रही हैं, वे समाप्त हो जाएँगी तथा इस देश के भटके हुए युवा अपनी चिर-विरासत को याद कर आगे बढ़ चलेंगे। इसे ही आध्यात्मिक अभ्युदय कहेंगे।

हम इसके लिए तैयार हों यह तभी संभव है, जब हमारा अंत:करण पूर्ण रूप से इस बात को स्वीकार कर ले कि हमारा जन्म एक दिव्य उद्देश्य के लिए हुआ है। वह अपनी व्यक्तिगत आकांक्षा से बढ़कर परम कल्याण के लिए जीने में है।

जब मनुष्य इस बात को पहचान जाता है कि वह देह मात्र नहीं है। इसके बाद उसे यह सोचना अनिवार्य हो जाता है कि मेरा अस्तित्व किन बातों पर टिका हुआ है और मुझे जाना कहाँ है। मैं पदार्थ की गुलामी क्यों करूँ, साधना से अपने आत्मपरिष्कार द्वारा एक निश्चिंत जीवन क्यों न जिऊँ।

इसी बात को समझकर जब वह आगे बढ़ता है तो उसे संतानोत्पत्ति संबंधी सही ज्ञान एवं प्रक्रिया-विशेष की प्राप्ति होती है। मनुष्य प्रजनन इसलिए न करे कि उसे अपना वंश चलाना है, बल्कि इसलिए करे कि एक अधिक योग्य मनुष्य इस धरती को मिल सके। हम जैसे हैं हमारी संतान उससे भी उन्नत होनी चाहिए, यही सिद्धांत प्रजनन का मूल उद्देश्य होना चाहिए।

यदि हम स्वयं विवेकवान नहीं हैं, हमने जीवन के यथार्थ दृष्टिकोण की प्राप्ति नहीं की तथा हमारा जीवन पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा रहा तो कैसे अपनी संतान को उस अनुरूप बना पाएँगे, जिसे अद्भुत एवं महान कहा जा सके। इसीलिए सबसे पहली आवश्यकता मनुष्य के सही शिक्षण की है। उसे सही कर लेने से इस देश की जाग्रत जनता स्वत: ही संतानोत्पत्ति से संबंधी नीति-नियमों का पालन करने लगेगी।

काम-वासना स्वयं में इतनी बड़ी चीज नहीं कि उसके पीछे मारे-मारे फिरा जाए। वह एक जरा-सा आवेग है, जिसने मनुष्य समुदाय को अपनी जकड़ में ले लिया है। जिसके पास उसे साध लेने का आत्मनियंत्रण है, वही उसे किसी दिव्य प्रयोजन हेतु प्रयुक्त कर सकता है। काम-वासना एक विकार

है, जिसका शमन करने हेतु हमें प्रतिभा की आवश्यकता होती है।

इसके बाद मनुष्य स्वत: ही अपने दिव्य केंद्र से परिचालित हो अपनी असीम संभावना के दिग्दर्शन करता है। उसका जीवन प्रकृतिप्रदत्त भावना का गुलाम नहीं, बल्कि सुमंगल की दिशा में गतिशील दिखाई पड़ता है। ऐसा व्यक्ति ही अपनी ऊर्जा का सदुपयोग करने में समर्थ होता है।

ऐसा इसलिए क्योंकि तब उस पर वासना का कोई प्रभाव नहीं पड़ता तथा वह एक ही रीति-नीति से कार्य करता है, वह है—त्याग और समर्पण की। जब इस समाज की यह समस्या पूर्ण रूप से सुलझ जाएगी तथा यह अपने पुण्य-प्रयोजनों हेतु गतिशील होगा, तब ही यह संभव है कि हम बढ़ती आबादी की समस्या को रोक सकें, औरों में वह प्रेरणा भर सकें कि मनुष्य के जन्म का उद्देश्य बहुत पवित्र एवं विशिष्ट है।

आप उसके लिए योग्य बनिए, इस प्रकार वासना का गुलाम बने रहने में बड़ी हानि है। वासना तभी तक सहयोगी है, जब तक उसने हमें किसी आवश्यक कर्त्तव्य की दिशा में न बढ़ाया हो। यदि वह हमें परतंत्र करती है, हमारी आत्मसंपदा को जीवन के निर्माण में न प्रयुक्त कर हानि की दिशा में ही जा बढ़ती है, तो इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा। हम मनुष्य इसलिए नहीं बने, ताकि इस एक ही वृत्ति के गुलाम बना दिए जाएँ।

मनुष्य जीवन का उद्देश्य है स्वयं को जागरूक कर हर क्षण उदीयमान चेतना के स्वरूप को ध्यान में रखकर जीवन को परिपूर्ण एवं महान बनाना। यदि यह हो जाता है तो आबादी के बढ़ने की समस्या रुक जाएगी, लोग स्वत: ही आदर्श मार्ग को ग्रहण करेंगे एवं तब विसंगतियाँ नहीं रहेंगी।

अपनी आत्मा के संस्कार को उजागर करना एवं उससे जीवन में नवनिर्माण की दिशा में बढ़ना ही हमारा कर्त्तव्य है। इसके लिए स्वयं को हर प्रकार के व्याधि-विकार से मुक्त करिए एवं फिर एकत्व की दिव्य प्रेरणा अनुसार आगे बढ़ने की सोचिए।

वासना हम पर आक्रमण न करे यह तो संभव नहीं, परंतु उसे किसी आदर्श के निमित्त सौंप देना यह अवश्य हमारे हाथ ही बात है। आप इसे करिए फिर देखिए कि जीवन कैसे सँवरता चला जाता है। वासना का प्रभाव उतना नहीं, जितना कि वह कल्पना के रूप में हमारे मन में समायी रहती है। उसे यदि त्याग दिया जाए तो उसके साथ जुड़े हुए बंधन के बीज भी समाप्त हो जाते हैं।

इस संसार को अधिक मनुष्यों की नहीं, वरन हृदय से परिपूर्ण, समताग्राही एवं स्वच्छ चरित्र के मनुष्यों की आवश्यकता है। आप उसे पूरा करिए एवं अपनी संतान को भी इस महान उद्देश्य के लिए प्रशिक्षित करिए।

आत्मनिर्माणरूपे यः पुरुषार्थे रतस्तथा।
सन्मार्गे साहसं गन्तुं तस्य पातो न सम्भवः॥

अर्थात जो आत्मनिर्माणरूपी पुरुषार्थ में निरत रहता है व जिसमें सन्मार्ग पर चलने का साहस है, उसका कभी पतन-पराभव नहीं होगा।

परिवार के वातावरण से सीखकर ही मनुष्य अपने नीति-व्यवहार में उत्कृष्ट तत्त्वों का समावेश करता है। परिवार एक इकाई है, जो व्यापक समाज का निर्माण करती है। इसलिए सर्वप्रथम मनुष्य को यह शिक्षण दिया जाए कि अपनी वासना पर विजय प्राप्त कर कैसे वह परिवार, समाज और राष्ट्र की सेवा में लग सकता है।

उसे अपने आप पर विश्वास हो कि जिस वासना ने उसे जन्म दिया वह काम-क्रीड़ा भर नहीं, बल्कि एक ऐसे प्रयोजन की सहयोगी है, जो हमें समग्र रूप से शांति प्रदान कर सके। ❑

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः

वैदिक साहित्य को विश्व का सबसे प्राचीन ग्रंथ माना जाता है। वेदों में जो मानव सभ्यता, संस्कृति और समाज का उदात्त स्वरूप है, उसका मूल स्रोत 'नारी' है। समस्त विश्व की उद्‌भावनी शक्ति की प्रतीक 'नारी' का स्थान सर्वोच्च शक्ति के रूप में हुआ है। इसे परमात्मा की सनातन शक्ति, देवताओं को जन्म देने वाली और संसार को देवत्व के संस्कार प्रदान करने वाली स्रष्टा की विशिष्ट कृति कहा गया है।

वैदिक ऋचाओं में अदिति को श्रेष्ठतम दैवी शक्ति व देवमाता के रूप में ऋषियों द्वारा स्वीकार किए जाने का उल्लेख है।

विश्वे देवाऽ अदितिः पंच जनाः।

—*यजुर्वेद, 25/23*

ऋग्वेद में तो स्वयं परमात्मा का स्वरूप ही नारी शक्ति के रूप में वर्णित है (ऋग्वेद, 2/41/16)।

परम ज्योति के अथाह समुद्र एवं ज्ञान और बुद्धि की अधिष्ठात्री सरस्वती की प्रार्थना परमात्मस्वरूप में ही की गई है। वाक्‌शक्ति के रूप में नारी तत्त्व की महिमा का ही वर्णन वेदों में हुआ है। परमात्मा के अव्यक्त से व्यक्त होने, निर्गुण से सगुण होने की प्रथम अभिव्यक्ति वाक् ही है। इसे परमात्मा का अचिंतनीय, अदृश्य और सूक्ष्मतम स्वरूप कहा गया है।

वाक्‌शक्ति की यही व्याख्या 'शब्द ब्रह्म' के रूप में उपनिषदों में प्रस्तुत हुई है। परमात्मा के नारी रूप को ही शब्दब्रह्ममयी, ज्योतिर्मयी और वाङ्मयी आदि उपमाओं से संबोधित किया गया है। आगे चलकर के वाक्‌शक्ति की इसी अवधारणा पर शाक्त दर्शन और उसकी साधनाओं का विकास हुआ है।

निर्गुण परमात्मा को प्रकट करने वाली शक्ति को ही अद्वैतवाद की अधिष्ठात्री भी कहा जाता है। वाक् देवी द्वारा देवीसूक्त, वागाम्भृणी सूक्त की रचना का ऋग्वेद में उल्लेख है (ऋग्वेद-10/125) जिसमें पराशक्ति रूप परमात्मा का विश्वरूप दर्शन है। इसी प्रकार रात्रिसूक्त (ऋग्वेद-10/127/1) में भी परमात्मतत्त्व को पराशक्ति के रूप में बताया गया है।

ऐसे अनेक सूक्त व ऋचाएँ वेदों में हैं, जिनमें नारी तत्त्व के रूप में परमात्मा की परमशक्ति का उल्लेख है। वैदिक साहित्य में नारी की यह महिमा उसके दैवी, सनातन एवं शक्ति स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं। भारतवर्ष में नारी का प्रारंभिक चिंतन दैवी शक्ति, परमात्मशक्ति के रूप में मिलता है। इस परम शक्ति के तीन आयाम—महालक्ष्मी, महासरस्वती और महाकाली के रूप में क्रमशः अर्थशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति का संसार में प्रतिनिधित्व करते हैं।

प्रकृति के तीनों गुण सत्, रज और तम इसी शक्ति के प्रतीक हैं। शास्त्रों में ब्रह्मा की सृजनशक्ति, विष्णु की पालनशक्ति और शिव की संहारशक्ति का वर्णन इसी संदर्भ में है। (देवी भागवतमहापुराण-1/2/20)। शक्ति के इन तीनों आयामों की त्रिगुणात्म प्रकृति आद्यशक्ति के रूप में भारतीय चिंतन में विस्तृत व्याख्या-विवेचना प्राप्त होती है। वेदों में नारी के इस आध्यात्मिक व दैवी स्वरूप के साथ-साथ उसका आधिभौतिक स्वरूप भी अत्यंत उदात्त आदर्शों से परिपूर्ण है।

सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में नारी की स्थिति एवं गरिमा पुरुषों से जरा भी कम नहीं है, अपितु कहीं-कहीं तो नारी को पुरुषों से ज्यादा महत्त्व देते हुए संपूर्ण जीवन और समाज का केंद्र ही बताया गया है।

नारी के प्रति ऐसे अप्रतिम सम्मान की भावना विश्व की अन्य सभ्यताओं-संस्कृतियों में किंचित् ही दिखाई पड़ती हो जो हमारी संस्कृति में विद्यमान है।

देवी, माता, कन्या, भगिनी, पुत्रवधू आदि के रूप में अत्यंत गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करने वाली नारी शक्ति ही भारतीय संस्कृति एवं समाज की अधिष्ठात्री रही है।

वैदिक साहित्य में इसके अनेक उपमापरक नाम मिलते हैं; जैसे—वामा, प्रमदा, ललना, मैना, स्त्री, घोषा, गृहिणी, भामा, रमणी, मानवी, कामिनी, मानिनी, सुंदरी आदि।

ब्राह्मण ग्रंथों में उल्लेख है कि ब्रह्मचर्य आश्रम को पूर्ण कर जब विवाह संस्था द्वारा संयोजित होकर कन्या गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती है तो वह 'स्त्री' पद को प्राप्त करती है। वह पति की अर्धांगिनी बनकर समस्त कार्यों और धर्मानुष्ठानों यथा यज्ञादि में उसकी सहभागी बनती है।

शतपथ ब्राह्मण—5/2/1/10 में यहाँ तक कहा गया है कि बिना पत्नी के पुरुष को यज्ञ व अन्य धार्मिक कार्य सर्वथा निषिद्ध हैं (तैत्तिरीय ब्राह्मण-2/2/2/6)। **जायेदस्तम्** अर्थात पत्नी ही घर है (ऋग्वेद-3/34/4)। पत्नी ही घर है का तात्पर्य है पत्नी ही घर की प्रतिष्ठा है, यही घररूपी साम्राज्य की संचालिका है (अथर्ववेद—14/1/43)।

दांपत्य जीवन में श्रेष्ठ संतति के प्रयोजन में भी नारी का अत्यधिक महत्त्व बताया गया है (अथर्ववेद-14/2/741)। वैदिक समाज में पुत्र एवं पुत्री में बिना किसी भेदभाव के समानता का आदर्श मौजूद था। पुत्री को भी पुत्र के समान उपनयन संस्कार, वेदाध्ययन, यज्ञ, अग्निहोत्र करने के समान अधिकारों का उल्लेख है।

श्रुतिविद् शिक्षित स्त्री को ही श्रौत यज्ञ करने के योग्य बताया गया है। सत्त्वगुण स्त्री आदर्श को ही वैदिक संस्कृति की प्रगति का मूल कहा गया है। इससे स्पष्ट होता है कि उस काल में नारी को शिक्षा की भी पूर्ण स्वतंत्रता थी।

शिक्षिता नारी के दो रूपों का उल्लेख आता है—

(1) ब्रह्मवादिनी और

(2) सद्योवधू या सद्योद्वाहा।

ब्रह्मवादिनी के भी तीन स्वरूप कहे गए हैं—ऋषिका, गृहिणी और उपाध्याया। वस्तुतः ब्रह्मवादिनी से तात्पर्य है—उच्चशिक्षिता। ऐसी स्त्रियाँ जो उच्चशिक्षित होकर ब्रह्म-चिंतन व ब्रह्म-विषयक व्याख्यान आदि में तपोमय जीवन बिताती थीं, उन्हें ब्रह्मवादिनी कहा जाता था।

इनका कार्य होता था अध्यात्म जीवन की रहस्यमयी गुत्थियों को अपनी तपस्या, अनुभूति और विद्वत्ता से सुलझाना व इसके लिए विद्वानों से शास्त्रार्थ आदि करना। बृहदारण्यक उपनिषद् में अविवाहित गार्गी और विवाहित याज्ञवल्क्य पत्नी मैत्रेयी, दोनों को ब्रह्मवादिनी कहा गया है (3/6/1 एवं 4/5/1)।

ब्रह्मवादिनी में ऋषिका उन्हें कहा जाता था, जिन्होंने तपोबल से ऋषित्व को प्राप्त कर अपनी ऋतंभरा प्रज्ञा में मंत्रों का साक्षात्कार किया हो। वृहद्देवता (2/82-84) में ऐसी 22 ब्रह्मवादिनी ऋषिकाओं का उल्लेख है—घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, ब्रह्मजाया, जुहूर्नाम्, स्वसादिति, इंद्राणी, रोमशा, लोपामुद्रा, यमी, शश्वती, श्रीलक्षि, सार्पराज्ञी, वाक्, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्रि, सूर्या, सावित्री, ब्रह्मवादिन्य आदि सभी ऋषिकाओं ने ऋग्वेद के

अनेक मंडलों में कई सूक्तों एवं ऋचाओं की रचना की हैं।

इसी प्रकार जो ब्रह्मवादिनी शिक्षण-अध्यापन कार्य का संपादन करती थीं, उन्हें उपाध्याया कहा गया है। सद्योद्वाहा वे स्त्रियाँ कही गई हैं, जो गृहस्थ आश्रम में प्रवेश कर पतिव्रता धर्म का पालन करते हुए मातृत्व पद को प्राप्त करती थीं तथा पति की सहचारिणी बनकर वैदिक नियमों के अनुसार धार्मिक कृत्यों की सहयोगी बनती थीं।

यजमान की पत्नी रूप में यज्ञ कार्य में इनका विशिष्ट स्थान होता था। इस प्रकार ब्रह्मवादिनी व सद्योद्वाहा के रूप में वैदिक साहित्य में नारी को उच्च स्थान प्राप्त था। यहाँ तक कि अरुंधती का नाम सप्तर्षि पद में आता है।

सच्चे अर्थों में वैदिक युग को नारी इतिहास का स्वर्णयुग कहा जा सकता है। इस काल की नारियों का जीवन भारतीय संस्कृति के नारी आदर्शों में स्वर्णाक्षर में अंकित है। वेदमंत्रों का साक्षात्कार करना व दार्शनिक चिंतन प्रस्तुत करना वैदिक काल की नारी की प्रतिभा और उच्चता का प्रमाण है। ऋग्वेद में 24 व अथर्ववेद में 5 नारियों के नाम आते हैं, जिन्होंने वेदमंत्रों का दर्शन किया। इन मंत्रों-ऋचाओं की संख्या क्रमशः 224 और 198 हैं।

इन वैदिक सूक्तों में से कुछ तो आध्यात्मिक एवं तत्त्वचिंतन की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। वाक्, आम्भृणी के वाक् सूक्त में वाक्तत्त्व का शास्त्रीय विवेचन है।

यह सूक्त भाषा विज्ञान की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। श्रद्धा कामायणी का 'श्रद्धा सूक्त' मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यंत मार्मिक सूक्त है। सूर्या-सावित्री के सूक्तों में विवाह संबंधी नियम-मर्यादाएँ वर्णित हैं।

इंद्राणी सूक्त में स्त्रियों की गरिमा का उल्लेख है। रोमशा अध्यात्म का उपदेश करती हैं। शश्वती द्वारा पति-पत्नी संबंध की पवित्रता-दिव्यता का उल्लेख हुआ है। इन सूक्तों का धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मर्यादाओं की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान है।

वैदिक समाज में नारी के प्रति यह धारणा भी प्रकट होती है कि वह ज्ञान-विज्ञान में अग्रणी तथा श्रेष्ठ बने तथा स्वतंत्र रूप से अपने विचारों को प्रकट करे। ज्ञान-विज्ञान में विदुषी होने के साथ ही वैदिक काल में नारी के शौर्य, साहस और पराक्रमी होने का भी उल्लेख मिलता है।

उस काल में युद्धों में भागीदारी और वीरता के आख्यान वेदों (5/30/9 व 10/159/5) में वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त नारी की सेवा-भावना, समर्पण, त्याग, तेजस्विता और चरित्रवान संतति की निर्मात्री, मातृत्व गौरव, सद्गृहिणी जैसे अनेक महान नारी आदर्शों का उल्लेख वैदिक साहित्य में मौजूद है। परिवार, समाज, संस्कृति और सभ्यता से लेकर राष्ट्र और विश्व-निर्माण में नारी शक्ति का स्थान एवं महत्त्व सर्वोपरि रहा है।

वैदिक काल के परवर्ती इतिहास में भी एक से बढ़कर एक नारी चरित्र के आदर्श स्थापित होते रहे हैं। भारतीय जीवन में नारी सदैव पूज्य और देवी के रूप में सम्मानित रही है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी भूमिका में दिखाई देती रही है।

भारतीय चिंतन सदैव नारी के प्रति श्रद्धावान रहा है। आधुनिकता के प्रभाव, मूढ़ताओं, भ्रांतियों और परंपराओं ने भारतीय नारी के इस आदर्श स्वरूप को जो हानि पहुँचाई है, वह किसी से छिपी नहीं है, परंतु अब समय है पुनः उस आत्मगौरव और सम्मान की दृष्टि लेकर जागरूक बनने और बनाने का।

इस दिशा में वैदिक साहित्य हम सभी का सर्वतोभावेन मार्गदर्शन करने में समर्थ है। इस प्राचीन विरासत के आलोक में वर्तमान में दिखाई पड़ने वाले आदर्शहीनता, मूल्यहीनता के संकट का समूल समाधान सन्निहित दिखाई पड़ता है। ❑

नववर्ष की मंगलकामना

नववर्ष में हम सबका जीवन प्रकाश, उल्लास एवं आध्यात्मिक ऊर्जा से संपन्न हो। सभी सुखी, सानंद रहें-ऐसी आराध्य सत्ता से हार्दिक कामना है।

❋ अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा

❋ युग निर्माण योजना
मथुरा

❋ शांतिकुंज
हरिद्वार

प्रमुख पर्व-त्योहार– 2026

12	जनवरी	विवेकानंद जयंती / राष्ट्रीय युवा दिवस
14	जनवरी	मकर संक्रांति
23	जनवरी	वसंत पंचमी / नेताजी सुभाष चंद्र बोस जयंती
26	जनवरी	गणतंत्र दिवस
30	जनवरी	शहीद दिवस
01	फरवरी	संत रविदास जयंती
15	फरवरी	महाशिवरात्रि
19	फरवरी	रामकृष्ण परमहंस जयंती
02	मार्च	होलिका दहन
03	मार्च	होली, धूलिवंदन
19	मार्च	चैत्र नवरात्रारंभ/संवत्सरारंभ
21	मार्च	ईदुलफित्र*
26	मार्च	श्रीराम नवमी
31	मार्च	महावीर स्वामी जयंती
02	अप्रैल	हनुमज्जयंती/चैत्र पूर्णिमा
14	अप्रैल	आंबेडकर जयंती
19	अप्रैल	परशुराम जयंती
20	अप्रैल	अक्षय तृतीया
01	मई	बुद्ध पूर्णिमा
16	मई	वट सावित्री व्रत
28	मई	ईदुज्जुहा*
17	जून	महाराणा प्रताप जयंती
24	जून	गायत्री जयंती/महाप्रयाण दिवस पूज्य गुरुदेव/गंगा दशहरा
25	जून	निर्जला एकादशी (भीमसेनी एकादशी)
29	जून	कबीर जयंती/ज्येष्ठ पूर्णिमा
16	जुलाई	रथयात्रा
25	जुलाई	देवशयनी एकादशी
29	जुलाई	गुरु पूर्णिमा
15	अगस्त	स्वतंत्रता दिवस
28	अगस्त	रक्षाबंधन
04	सितंबर	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
14	सितंबर	गणेश चतुर्थी
15	सितंबर	ऋषि पंचमी
19	सितंबर	राधाष्टमी
23	सितंबर	वामन जयंती
26	सितंबर	महालयारंभ/महाप्रयाण दिवस वंदनीया माताजी
30	सितंबर	माता भगवती देवी शर्मा जयंती
02	अक्टूबर	गांधी/शास्त्री जयंती
08	अक्टूबर	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जयंती
10	अक्टूबर	पितृमोक्ष अमावस्या
11	अक्टूबर	शारदीय नवरात्रारंभ
21	अक्टूबर	विजयादशमी
25	अक्टूबर	शरद पूर्णिमा/वाल्मीकि जयंती
29	अक्टूबर	करवा चौथ
06	नवंबर	धन्वंतरि जयंती/धनतेरस
08	नवंबर	दीपावली
09	नवंबर	अन्नकूट/गोवर्धन पूजा
11	नवंबर	भाईदूज/यमद्वितीया
14	नवंबर	बाल दिवस
15	नवंबर	सूर्य षष्ठी
18	नवंबर	अक्षय नवमी/आँवला नवमी
20	नवंबर	देव प्रबोधिनी एकादशी/ देवठान
24	नवंबर	गुरुनानक जयंती/ देव दीपावली
20	दिसंबर	गीता जयंती/मोक्षदा एकादशी
23	दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती
25	दिसंबर	क्रिसमस

* चंद्रदर्शन के अनुसार परिवर्तनीय

मंगलवर्ष- 2026

जनवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
				01	02	03
04	05	06	07	08	09	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

फरवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28

मार्च

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

अप्रैल

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
			01	02	03	04
05	06	07	08	09	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30		

मई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
31					01	02
03	04	05	06	07	08	09
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

जून

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

जुलाई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
			01	02	03	04
05	06	07	08	09	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

अगस्त

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
30	31					01
02	03	04	05	06	07	08
09	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

सितंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
		01	02	03	04	05
06	07	08	09	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30			

अक्टूबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
				01	02	03
04	05	06	07	08	09	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

नवंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30					

दिसंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
		01	02	03	04	05
06	07	08	09	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

शुभकामना

शिवमस्तु सर्वजगतां परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः
दोषाः प्रयान्तु शान्तिं सर्वत्र सुखी भवतु लोकः।।

सबका कल्याण हो, सभी बिना किसी द्वेषभाव के एकदूसरे का हित साधन करें। सभी प्रकार के कायिक, वाचिक, मानसिक दोष शांत हों—सभी सुखी रहें।

प्रेरणा–प्रभाव से भरे भारत के अद्भुत गाँव

भारत गाँवों का देश है। यहाँ की 65% जनसंख्या गाँवों में रहती है। हर गाँव की अपनी संस्कृति, पहचान एवं विशेषता रहती है, लेकिन कुछ गाँव अपनी अद्वितीय विशेषताओं के कारण लोगों के बीच कुतूहल का विषय बनते हैं, सुर्खियाँ बटोरते हैं और लोगों को कुछ प्रेरणा भी देते हैं। प्रस्तुत है भारत के कुछ ऐसे ही विशिष्ट गाँवों का संक्षिप्त विवरण।

मलाना—हिमालय की वादियों में, पार्वती घाटी में मणिकर्ण के समीप, पर्वत-शृंखलाओं के मध्य छिपा एक एकांतिक गाँव है, जिसे विश्व का सबसे पुरातन लोकतंत्र भी माना जाता है, जो अपनी लोकतांत्रिक प्रणाली, संस्कृति और भाषा के कारण प्रसिद्ध है।

इसे छोटा यूनान भी कहा जाता है। माना जाता है कि भारत में सिकंदर महान के कुछ सैनिक पीछे छूट गए थे, जिन्होंने पर्वत की इन दुर्गम उपत्यिकाओं में शरण ली थी। यहाँ की व यूनान की भाषा व पहनावे में साम्यता देखी गई है। यहाँ के केंद्रीय अधिपति हैं जम्लू देवता, जिनका आदेश सर्वोपरि माना जाता है।

इनके मंदिर में शुचिता का विशेष ध्यान रखा जाता है, इसलिए यहाँ बाहर से आए आगंतुकों का मंदिर में प्रवेश व इनके पावन प्रतीकों का स्पर्श निषिद्ध है। गलती होने पर प्रायश्चितस्वरूप दंड देना पड़ता है।

शनि शिंगणापुर—महाराष्ट्र का एक ऐसा गाँव है, जहाँ घर में दरवाजे नहीं होते, इसके बावजूद यहाँ चोरी की घटनाएँ नहीं होतीं। इसका कारण गाँव में इनके इष्टदेव भगवान शनि के प्रख्यात मंदिर का होना है और यहाँ के निवासी शनिदेव के नैष्ठिक भक्त हैं, जो उनकी रक्षा करते हैं।

नित्यप्रति लगभग 30 से 45 हजार भक्तों का यहाँ आगमन होता है, जिनकी संख्या शनि अमावस्या पर तो 3 लाख तक पहुँच जाती है, इसके बावजूद यहाँ किसी तरह की अप्रिय घटना नहीं घटती।

यहाँ के निवासियों का मानना है कि यदि कोई व्यक्ति किसी तरह की चोरी करेगा तो वह शनिदेव के कोप का भाजन बनेगा। इस तरह शनिदेव उनकी रक्षा करते हैं और वे घरों में ताला तो दूर, दरवाजे भी नहीं लगाते। यहाँ के लोग बिना दरवाजे वाले घरों में रहते हैं और चैन की नींद सोते हैं। लोगों की यह देव आस्था और गाँव का धार्मिक वातावरण सबको प्रभावित करता है।

मावलिननोंग—यह भारत का सबसे स्वच्छ गाँव माना जाता है। यह मेघालय के पूर्वी खासी हिल्स जिले में स्थित है। यह एशिया के सबसे स्वच्छ गाँव के रूप में भी प्रसिद्ध है। इसकी हरियाली और स्वच्छता देखने योग्य रहती है। यहाँ लोग सफाई को विशेष महत्त्व देते हैं और इसके लिए सख्त नियम हैं।

यहाँ प्लास्टिक का उपयोग नहीं किया जाता है। कचरे के निष्पादन व स्वच्छता में लोगों की सामूहिक भागीदारी रहती है। अपनी इस विशेषता के कारण मावलिननोंग एक लोकप्रिय पर्यटनस्थल भी बन चुका है, जो अपनी स्वच्छता व प्राकृतिक सुंदरता के कारण पर्यटकों को आकर्षित करता है। यह गाँव सौ प्रतिशत साक्षरता भी प्राप्त कर चुका

है। कुल मिलाकर यहाँ के निवासियों का श्रमशील एवं अनुशासित जीवन पर्यटकों को प्रभावित एवं प्रेरित करता है।

कोडिन्ही—केरल का एक दूरदराज गाँव है, जो जुड़वाँ बच्चों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ संभवतः सबसे अधिक संख्या में जुड़वाँ बच्चे पैदा हुए हैं, जो स्वयं में एक बड़ा रहस्य है। यहाँ 2000 की आबादी में लगभग 450 जुड़वाँ जोड़े रहते हैं। देश में जुड़वाँ बच्चों का औसत जहाँ 1000 की जनसंख्या में 9 का है, वहीं इस गाँव में यह औसत 45 का है।

गाँववाले जहाँ इसका कारण स्थानीय देवता की कृपा और कुछ यहाँ के जल की विशेषता को मानते हैं, जो लोगों की प्रजनन-क्षमता में वृद्धि करते हैं। जबकि वैज्ञानिक इसकी गुणसूत्र आधारित व्याख्या करते हैं। हालाँकि अभी तक इस रहस्यमयी घटना के कारण स्पष्ट नहीं हुए हैं, लेकिन यह लोगों के लिए एक आश्चर्य का विषय तो है ही।

मत्तूर—कर्नाटक के शिमोगा जिले में तुंगा नदी के किनारे स्थित एक ऐसा गाँव है, जहाँ के निवासी संस्कृत में वार्त्तालाप करते हैं। इसे भारत का संस्कृत गाँव कहा जाता है। हालाँकि कर्नाटक की आधिकारिक भाषा कन्नड़ है, लेकिन यहाँ के निवासी अपने दैनंदिन जीवन में संस्कृत में वार्त्तालाप करते हैं।

संस्कृत भाषा व अपनी संस्कृति के प्रति सजग इस गाँव में गुरुकुल की व्यवस्था है, जहाँ बच्चे वेद व संस्कृत का अध्ययन करते हैं। यहाँ के घरों की दीवारों पर संस्कृत के श्लोकों को देखा जा सकता है और यहाँ के लोगों की वेशभूषा व रहन-सहन भारतीय संस्कृति का संचार करती है। इस गाँव के पाँच हजार निवासियों में से अधिकांश की भाषा संस्कृत है और इस गाँव ने तीस से अधिक संस्कृत के प्रोफेसर दिए हैं, जो कर्नाटक भर के विश्वविद्यालयों में पढ़ाते हैं। इस तरह यह गाँव प्राचीन देवभाषा संस्कृत को जीवित रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

कांगथोंग—मेघालय का एक शांत और मनोरम पहाड़ी गाँव है, जहाँ पर लोग एकदूसरे को नाम लेकर नहीं, वरन सीटी बजाकर बुलाते हैं। इस कारण इसे सीटी बजाने वाला गाँव भी कहा जाता है। यहाँ हरेक व्यक्ति की भिन्न सीटी होती है। गाँव के जन्म लेने वाले हर बच्चे को उसकी माँ द्वारा एक विशेष धुन दी जाती है, जो जीवनभर के लिए उसकी पहचान बन जाती है।

इस धुन के भी दो संस्करण होते हैं—एक लंबी धुन जो दूर से बुलाने के लिए उपयुक्त होती है और दूसरी छोटी धुन, जिसका उपयोग घर के अंदर होता है। लोग नाम के बजाय इस धुन का उपयोग संवाद में करते हैं। यह माना जाता है कि ऐसा करने पर वे जंगलों की बुरी आत्माओं से बचे रहते हैं। कांगथोंग गाँव घने जंगलों से घिरा हुआ है, जहाँ की पहाड़ियाँ ऊँची और घाटियाँ गहरी हैं, जिस कारण सीटी बजाकर संवाद करने का यह तरीका काफी प्रभावशाली रहता है।

यह गाँव अपनी प्राकृतिक सुंदरता के लिए भी जाना जाता है। यहाँ के हरे-भरे पहाड़, सुंदर झरनों के साथ यहाँ पेड़ों-बेलों से बना प्राकृतिक पुल भी पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र रहता है। सीटी बजाकर संवाद करने की गाँव की यह विशेषता पर्यटकों के साथ विश्वभर के भाषा अनुसंधान विद्वानों को भी आकर्षित करती है।

पिपलांत्री—राजस्थान के राजसमंद जिले में स्थित एक ऐसा गाँव है, जो बेटी के जन्म पर 111 वृक्ष लगाए जाने के लिए जाना जाता है। जब भी गाँव में किसी कन्या का जन्म होता है, तो परिवार और समुदाय के लोग मिलकर उसके नाम पर 111 पौधे लगाते हैं। साथ ही उस बेटी के नाम पर 21,000 रुपये भी जमा कराए जाते हैं, जो 20 वर्ष के लिए बैंक में रखे जाते हैं।

इस पहल का सुखद परिणाम हरे-भरे गाँव के रूप में प्रत्यक्ष है, जिसके चलते बारिश में

मिट्टी कटाव की समस्या से गाँव मुक्त है और जल की कमी भी पूरी होती है। इस पहल के चलते आज पिपलांत्री गाँव एक आदर्श गाँव के रूप में प्रख्यात है और देश-विदेश से पर्यटक इसको देखने आते हैं और उस पर कई वृत्तचित्र बन चुके हैं। गाँव का बेटियों के प्रति यह सकारात्मक दृष्टिकोण और पर्यावरण संरक्षण की यह पहल स्तुत्य है, जो सभी के लिए प्रेरक है, अनुकरणीय है।

माधापार—यह भारत का सबसे अमीर गाँव है। प्रतिव्यक्ति आय की दृष्टि से यह एशिया का सबसे अमीर गाँव माना जाता है। 7600 परिवार वाले इस गाँव की प्रतिव्यक्ति आय 15 से 20 लाख रुपये के बीच है। गाँव में 17 बैंक और डाकघर हैं, जिनमें 7000 करोड़ से अधिक की धनराशि जमा है। जिसका श्रेय मुख्यतया यहाँ के प्रवासी भारतीयों (एनआरआई) को जाता है, जो यूरोप से लेकर अमेरिका एवं खाड़ी देशों में फैले हुए हैं।

यहाँ की 65 प्रतिशत जनसंख्या विदेशों में रहती है। वे वहाँ से कमाकर अपने घरवालों को पैसा भेजते हैं। खरच करने के अतिरिक्त धन को गाँववासी बैंक में रखते हैं। विदेश में रहने के बावजूद यहाँ के लोग अपनी जड़ों से जुड़े हुए हैं, जिसके लिए 1968 में माधापार ग्राम एसोसिएशन की स्थापना की गई थी। सन् 1971 के युद्ध के दौरान यहाँ की महिलाओं ने पाकिस्तानी हमलों में क्षतिग्रस्त हुई हवाई पट्टी को कुछ ही घंटों में ठीक करने में सहायता की थी। अपने कठोर श्रम, एकजुटता और जड़ों से जुड़ने के साथ इस गाँव की समृद्धि की कहानी प्रेरणा देती है।

खोनोमा—नागालैंड का एक मनोरम गाँव है, जिसे भारत का ही नहीं एशिया का पहला ग्रीन विलेज कहा जाता है। यह नागालैंड की राजधानी कोहिमा से 20 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। 700 वर्ष पुराना यह गाँव चारों ओर हरियाली से घिरा हुआ है, जो अपनी जैव-विविधता और प्राकृतिक सौंदर्य के लिए प्रख्यात है।

यहाँ के लोग जैविक कृषि पर विशेष ध्यान देते हैं और पर्यावरण संतुलन में अपना योगदान देते हैं। राज्य का यह पहला गाँव है, जिसमें अवैध कटाई और शिकार पर प्रतिबंध लगा हुआ है। यहाँ के लोगों की पर्यावरण और जैव-विविधता के प्रति जागरूकता निस्संदेह अनुकरणीय है, जिससे पर्यटक प्रभावित हुए बिना नहीं रहते।

इस तरह से भारत के ये गाँव अपनी मौलिक विशेषता लिए हैं व पाठकों का ज्ञानवर्धन करते हैं। इन क्षेत्रों की यात्रा के दौरान दर्शनीयस्थलों की सूची में इन्हें शामिल किया जा सकता है और यहाँ की अनुकरणीय बातों को अपने गाँव व क्षेत्र में लागू किया जा सकता है। ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

धरती का वैकुंठ है श्री जगन्नाथपुरी धाम

भारत सूर्य भगवान की लीलाभूमि रही है। कभी धर्म की रक्षा, कभी भक्तों, संतों की रक्षा तो कभी अपने भक्तों द्वारा भगवान के विभिन्न रूपों के दर्शन को पाने की अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए विभिन्न युगों में, विभिन्न क्षेत्रों में भगवान का प्राकट्य विभिन्न रूपों में होता रहा है। जिन स्थानों पर भगवान ने जिस रूप में लीलाएँ कीं—वे स्थान भगवान के नाम, रूप व लीला विशेष के कारण अलग-अलग नामों व तीर्थों के रूप में जाने गए व प्रसिद्ध हुए।

जहाँ भगवान कृष्ण द्वारका में भगवान द्वारकाधीश के रूप में जाने गए तो वहीं भगवान कृष्ण पंढरपुर में भगवान पांडुरंग, भगवान विट्ठल अथवा विठोबा के रूप में जाने गए और ऐसे ही वहीं भगवान कृष्ण पुरी में श्री जगन्नाथ भगवान के रूप में जाने गए। जो भगवान कृष्ण, जगत् के ईश्वर अर्थात जगदीश्वर हैं, जो जगत् के नाथ हैं वे ही पुरी में श्री जगन्नाथ भगवान के नाम से प्रतिष्ठित हैं।

भगवान की लीलाभूमि होने के कारण ही पुरी जगन्नाथपुरी धाम के रूप में जगविख्यात हुई। जगन्नाथ पुरी वैष्णव संप्रदाय के चार धामों में से एक है, जो भगवान जगन्नाथ को समर्पित है। इस मंदिर में भगवान श्रीकृष्ण अपने भाई बलराम और बहन सुभद्रा के साथ विराजमान हैं।

धर्मशास्त्रों में जगन्नाथपुरी को शाकक्षेत्र, शंखक्षेत्र, श्रीक्षेत्र, पुरुषोत्तम क्षेत्र, नीलांचल और नीलगिरि आदि विभिन्न नामों से भी जाना जाता है। कहते हैं कि प्राचीन समय में यहाँ नीलांचल पर्वत था, जहाँ देवतागण नीलमाधव भगवान की पूजा किया करते थे।

नीलांचल पर्वत के धरती में समा जाने के बाद उनकी मूर्ति को देवतागण यहाँ इस स्थान पर ले आए, किंतु यह स्थान नीलांचल के नाम से ही जाना गया। यहाँ लक्ष्मीपति भगवान विष्णु ने तरह-तरह की लीलाएँ की थीं। ब्रह्म और स्कंद पुराण के अनुसार भगवान विष्णु के अवतार भगवान कृष्ण ही नीलमाधव के रूप में यहाँ अवतरित हुए और वहीं भगवान नीलमाधव अर्थात भगवान श्रीकृष्ण यहाँ भगवान जगन्नाथ के रूप में विराजमान हैं। मान्यता है कि पूर्व में भगवान नीलमाधव स्वयं नीलांचल पर्वत पर निवास करते थे।

एक बार जब मालवा के राजा इंद्रद्युम्न यहाँ पर भगवान के दर्शन हेतु आए तब भगवान नीलमाधव अचानक अदृश्य हो गए। राजा की विशेष प्रार्थना करने पर एक रात भगवान ने उनको सपने में दर्शन दिए और कहा कि तुम्हें मैं अवश्य दर्शन दूँगा, पर सर्वप्रथम तुम यहाँ एक विशाल मंदिर का निर्माण कराओ।

राजा ने मंदिर बनवा दिया और भगवान से मंदिर में विराजमान होने के लिए कहा। तब भगवान ने राजा को सपने में कहा कि तुम मेरी मूर्ति बनाने के लिए समुद्र में बह रहे पेड़ के बड़े टुकड़े को उठा कर लाओ, जो द्वारका से समुद्र में बहकर पुरी आ रहा है।

राजा के सेवकों ने उस पेड़ के टुकड़े को तो ढूँढ़ लिया, लेकिन सब लोग मिलकर भी उस टुकड़े को नहीं उठा पाए। तब राजा को यह समझ आ गया कि नीलमाधव के अनन्य भक्त सबर कबीलों के मुखिया विश्ववसु ही यह काम कर सकते हैं। उन्होंने विश्ववसु से आग्रह किया और सब उस वक्त हैरान

रह गए, जब विश्ववसु उस भारी-भरकम लकड़ी को उठाकर मंदिर तक ले आए।

अब बारी थी उस लकड़ी से भगवान की मूर्ति गढ़ने की। राजा के कारीगरों ने लाख कोशिश कर ली, पर कोई भी लकड़ी में एक छेनी तक भी नहीं लगा सका। तब तीनों लोक के कुशल कारीगर भगवान विश्वकर्मा एक बूढ़े व्यक्ति का रूप धरकर आए और उन्होंने राजा से कहा कि वे मूर्ति बना सकते हैं। उन्होंने उस लकड़ी से भगवान की मूर्ति बनाई। तब भगवान ने राजा को स्वप्न में दर्शन देते हुए बताया कि अब वे आज से काष्ठ की उसी मूर्ति में प्रकट होकर जगन्नाथ के रूप में दर्शन दिया करेंगे।

राजा ने भगवान की इच्छा मानकर उन मूर्तियों को स्थापित कर दिया। तब से लेकर आज तक तीनों भाई-बहन यहाँ इसी रूप में विद्यमान हैं। यह स्थान आदि शंकराचार्य का भी महत्त्वपूर्ण पड़ाव रहा। अपने पुरी प्रवास के दौरान आदि शंकराचार्य ने अपनी विद्वत्ता से यहाँ के बौद्ध मठाधीशों को सनातन धर्म की ओर आकृष्ट किया था। उन्होंने यहाँ गोवर्धन पीठ की स्थापना की और इस पीठ के प्रथम जगद्‌गुरु के रूप में उन्होंने अपने चार शिष्यों में से एक पद्मपादाचार्य जी को नियुक्त किया था।

यह सर्व ज्ञात है कि आदि शंकराचार्य जी ने ही जगन्नाथ की गीता पुरुषोत्तम के रूप में पहचान घोषित की थी। 12 वीं सदी में पुरी में श्री रामानुजाचार्य जी के आगमन और उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर तत्कालीन राजा चोलगंगदेव की आसक्ति वैष्णव धर्म के प्रति हो गई। तत्पश्चात अनेक वैष्णव आचार्यों ने पुरी को अपनी कर्मस्थली बनाकर यहाँ अपने मठ स्थापित किए और इस तरह पूरा ओडिशा ही धीरे-धीरे वैष्णव रंग में रँग गया। अज्ञातवास के दौरान पाँच पांडव भी भगवान जगन्नाथ के दर्शन करने यहाँ आए थे।

श्री मंदिर के अंदर पांडवों का स्थान अब भी मौजूद है। जैसे सारी नदियाँ समुद्र से मिलने को आतुर रहती हैं, वैसे ही भक्त, संत, साधक, उपासक, आराधक, भगवान जगन्नाथ के दर्शन पाने को आतुर आकुल-व्याकुल रहते रहे हैं।

'गीत गोविंद' के रचयिता, कवि जयदेव का भगवान जगन्नाथ के प्रति गहरा व परम अनुराग रहा है। तभी तो गीत गोविंद में उन्होंने भगवान कृष्ण को जगन्नाथ के रूप में संबोधित किया है। गीत गोविंद काव्य में जयदेव ने जगदीश का ही जगन्नाथ, दशावतारी, हरि, मुरारी, केशव, माधव, कृष्ण इत्यादि नामों से उल्लेख किया है। इस काव्य में राधा-कृष्ण के मिलन-विरह तथा पुनर्मिलन को कोमल, लालित्यपूर्ण व पूर्ण भक्तिभरे भाव से प्रस्तुत किया गया है।

जयदेव को भगवान जगन्नाथ का परम भक्त माना जाता है। साधकों के हृदय में भगवान के लिए परम प्रेम व पवित्र भक्तिभाव पैदा करने व भगवान जगन्नाथ को प्रसन्न करने के लिए पुरी के जगन्नाथ मंदिर में जयदेव के गीत गोविंद का नित्य पाठ किया जाता रहा है। गीत गोविंद को पारंपरिक ओडिसी संगीत के रागों और तालों में भी गाया जाता है, जो पुरी के जगन्नाथ मंदिर में पारंपरिक रूप से किया जाता है।

इसी तरह सदन कसाई भगवान के परम भक्त थे। वे कसाई का काम करते हुए भी भगवान की भक्ति में लीन रहते थे। एक बार वे भगवान जगन्नाथ के दर्शन की अभिलाषा से पुरी की ओर चल पड़े। मार्ग पर चलते हुए संध्या के समय एक गाँव में एक स्त्री के आग्रह करने पर वे उसके घर पर रात्रि विश्राम को ठहर गए। आधी रात्रि के समय उनके रूप पर मोहित होकर उस घर की स्त्री उनके समक्ष आई और उनसे अशिष्ट चेष्टाएँ चाहने लगी, पर सदन जी ने उसके इस अमर्यादित आचरण को अस्वीकार कर दिया।

इसे अपना अपमान मानकर उस स्त्री ने अपने पति की स्वयं हत्या कर हत्या का आरोप सदन कसाई पर लगा दिया। दंडस्वरूप वहाँ के राजा ने सदन के दोनों हाथ कटवा दिए। सदन के हाथ कट गए और रक्त की धारा बहने लगी, पर वे इसे भी अपने आराध्य, अपने भगवान की कृपा ही मानते रहे और उनके मन में भगवान के प्रति कोई भी रोष नहीं आया।

भगवान के सच्चे भक्त इस तरह जीवन में मिलने वाले दु:ख को भी अपने स्वामी की दया व कृपा ही मानते हैं। उस दु:ख, पीड़ा की स्थिति में भी वे भगवान का नामस्मरण, कीर्तन करते हुए जगन्नाथपुरी की ओर बढ़ चले और उधर अंतर्यामी, सर्वव्यापक जगन्नाथ भगवान ने पुजारी को सपने में आदेश दिया कि मेरा भक्त सदन मेरे पास आ रहा है, उसके हाथ कट गए हैं। तुम पालकी लेकर जाओ और उसे आदरपूर्वक ले आओ।

पुजारी पालकी लिवा कर गए और आग्रहपूर्वक भक्त सदन को उसमें बैठाकर ले आए।

सदन ने जैसे ही श्री जगन्नाथ जी को दंडवत् करने के लिए भुजाएँ उठाईं, तभी उनके दोनों हाथ पूर्ववत् ठीक हो गए। सदन ने भगवान की असीम कृपा का अनुभव किया। वे भगवत्प्रेम में पूरी तरह लीन हो गए और बहुत समय तक वे वहाँ भगवान के गुणों की प्रशंसा करने, उनके नाम का कीर्तन करने और उनके ध्यान में मग्न रहने के बाद वहाँ से निकले।

अंत में वे वहीं पुरुषोत्तम क्षेत्र में निवास करते हुए अपने शरीर को त्यागकर परमधाम में पहुँच गए। यह कथा इस बात का प्रमाण है कि सच्ची भक्ति व श्रद्धा से भगवान की कृपा अवश्य प्राप्त होती है। परम भागवत, परम वैष्णवाचार्य चैतन्य महाप्रभु भी पुरी में वर्षों तक निवास करते हुए भगवान जगन्नाथ की भक्ति करते हुए पल-पल उनकी अनुभूति और दर्शन पाते रहे और अंतत: उन्हीं में विलीन हो गए।

पुरी में रहते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु कृष्ण वियोग में, उनके विरह-भाव में दिन-रात उन्मत्त दिखाई देते थे। वे कभी हँसते, कभी रोते, कभी नाचते तो कभी कीर्तन करने लग जाते। हर पल वे भगवान कृष्ण की सुंदरता, सुगंध और मधुरता का आनंद इस प्रकार लेते मानो वे श्रीकृष्ण को अपने हाथों से स्पर्श कर रहे हों।

वे अपने दो साथियों, रामानंद राय और स्वरूप दामोदर के साथ कृष्ण कर्णामृत, गीत गोविंद, श्रीमद्‌भागवत और जगन्नाथ वल्लभनाटक के दिव्य आनंदमय गीतों और श्लोकों का रसास्वादन करते थे। वे जब भगवान जगन्नाथ के दर्शन करने जाते तब उनकी भावनाएँ ठीक वैसी ही होती थीं, जैसी गोपियों की कृष्ण के प्रति थीं।

वे दिन में नृत्य और कीर्तन में लीन रहते थे, फिर जगन्नाथ मंदिर के विग्रह का दर्शन करते थे और रात्रि में भगवान कृष्ण की लीलाओं के दिव्य रस का रसपान करते थे। इस प्रकार पुरी में भक्त, संत, आराधक, उपासक एवं साधक श्री जगन्नाथ भगवान के दर्शन को आते रहे और उनके दर्शन पाकर तृप्त होते रहे।

यहाँ हर वर्ष निकलने वाली भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा आस्था, भक्ति और सांस्कृतिक परंपरा का एक ऐसा महोत्सव है, महाकुंभ है, संगम है जिसमें भाग लेकर हर कोई अपने को धन्य मानता है। यह यात्रा हर वर्ष आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि को शुरू होती है और दशमी तक चलती है।

कहते हैं कि रथयात्रा की शुरुआत 12वीं शताब्दी में हुई थी। रथयात्रा में बलभद्र जी का रथ सबसे आगे होता है, फिर सुभद्रा जी का और सबसे पीछे जगन्नाथ देव का रथ होता है। रथयात्रा के

दौरान मंदिर के सेवक भगवान जगन्नाथ, बलदेव और सुभद्रा जी को मंदिर से बाहर निकालकर रथों पर बिठाते हैं।

भगवान रथ पर सवार होकर भक्तों को स्वयं दर्शन देने के लिए नगर की यात्रा करते हैं। भगवान के रथ को भक्तजन स्वयं खींचते हैं और अपनी भक्ति व्यक्त करते हैं।

जगन्नाथ धाम को धरती का वैकुंठ भी माना जाता है और यहाँ भगवान के दर्शन करने से सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

यह धाम न सिर्फ भारत में, बल्कि विश्वभर में प्रसिद्ध है और हर वर्ष लाखों लोग यहाँ भगवान जगन्नाथ के दर्शन करने आते हैं। ❑

हेमकूट राज्य के राजकुमार जीमूतवाहन अपने मित्रों के साथ समुद्र तट पर भ्रमण को निकले। मार्ग में एक छोटा-सा पर्वत पड़ा, जिसका नाम गोकर्ण था। उन्होंने देखा कि वहाँ अस्थियों के बड़े-बड़े ढेर लगे हुए थे, उन्हें देख राजकुमार ने अपने मित्र वसु से इसका कारण पूछा। वसु ने उत्तर दिया—"ये ढेर नागों की अस्थियों का है। नागों व गरुड़ों की पुरानी शत्रुता है, पर नाग शारीरिक बल में गरुड़ों से कमतर हैं। अतः उन्होंने यह समझौता किया है कि प्रतिदिन एक नाग अपने वध हेतु गरुड़ के पास आता है और उसकी कोप-ज्वाला शांत करता है।"

यह सुनकर राजकुमार का हृदय द्रवित हो उठा और उन्होंने इस अन्याय का प्रतिकार करने का प्रण किया, पर इतनी शक्ति उनमें नहीं थी कि वे गरुड़ों को परास्त कर पाते, अतः अगले दिन वे नाग वेश में गरुड़ के समक्ष पहुँच गए। गरुड़ ने उनका वध कर दिया, पर उसे आश्चर्य हुआ कि प्रतिदिन नाग मृत्यु के समय रोते-चीखते हैं, फिर यह क्यों नहीं चिल्लाया। पता करने पर उसे ज्ञात हुआ कि यह शव राजकुमार जीमूतवाहन का है। वह यह जानकर ग्लानि से भर उठा और बोला—"विश्व में ऐसी भी विभूतियाँ हैं, जो परोपकार हेतु अपने प्राण दे देती हैं। एक मैं हूँ, जो अपनी शत्रुता के लिए अनेकों निर्दोषों का वध करता हूँ।" उस दिन से गरुड़ ने नागों की बलि लेना बंद कर दिया। जीमूतवाहन अपने प्राणों की आहुति देकर भी अमर हो गए।

एक प्रेतात्मा के साथ संवाद

चौरासी लाख योनियों में एक योनि भूत-प्रेतों की भी मानी जाती है। कहते हैं कि मृत्यु के बाद जीवात्मा को अपने जीवन में किए गए कर्मों के अनुसार भूत-प्रेत की योनि प्राप्त होती है और नया जीवन यानी पुनर्जन्म होने से पूर्व तक उसे भूत-प्रेत की योनि में ही भटकना पड़ता है।

भूत-प्रेतों की कहानियाँ रोचक भी होती हैं और रहस्यमयी भी। अब तो विज्ञान भी अदृश्य तत्त्वों के अस्तित्व को स्वीकारने लगा है। क्या भूत-प्रेतों को देखा जा सकता है ? क्या उनसे कोई मनुष्य संवाद कर सकता है ? वे कहाँ और कैसे रहते हैं ? वे क्या और कैसे खाते-पीते हैं ? वे कैसे भ्रमण करते हैं ? आदि प्रश्नों के उत्तर जानने की जिज्ञासा हर किसी में होती है। यहाँ एक ऐसी ही कहानी का उल्लेख किया जा रहा है, जिसमें उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर हमें मिलते हैं और हमें अचंभित करते हैं।

स्थूलशरीर की समाप्ति के बाद जीवात्मा को यदि प्रेतयोनि प्राप्त होती है तो उसे वायु शरीर में अथवा अशरीरी अवस्था में ही रहना पड़ता है। वर्षों पूर्व की एक घटना है। एक व्यक्ति को महाराष्ट्र में भ्रमण के दौरान एक बार सोलापुर के पास एक गाँव में ठहरना पड़ा।

एक रात वहाँ का एक किसान उसे अपने खेत में ले गया। वहाँ गुड़ बनाने के लिए गन्ने की पेराई की जाती थी। वह व्यक्ति रात में वहीं रुक गया, पर रात में गन्ने की पेराई करने वाले यंत्र की लगातार आवाजें आने से उसे नींद नहीं आ रही थी, तब उसने उस किसान से पूछकर वहाँ से आधे मील की दूरी पर स्थित दूसरे खेत में जाकर सोने का निर्णय किया और वहाँ जाकर एक अनुकूल जगह पर बिछौना बिछाकर वह सो गया।

सुबह जल्दी उठने की आदत के कारण वह तीन बजे उठ गया। वह अपनी दिनचर्या के अनुसार ध्यान में बैठने की तैयारी कर रहा था कि तभी उसे अपने आस-पास किसी अन्य की उपस्थिति का आभास हुआ। नजर उठाकर देखा तो उसके समक्ष एक रुपहली रेखाओं से बनी मानव आकृति दिखाई पड़ी।

वह मानवी आकृति उससे दस फुट की दूरी पर थी और जमीन से लगभग तीन फुट ऊपर हवा में स्थिर थी। नित्य भजन, भगवद्स्मरण, ध्यान आदि के प्रभाव से वह व्यक्ति आत्मबलसंपन्न था और इसी कारण वह उस आकृति को देखकर घबराया नहीं, डरा नहीं, बल्कि उस आकृति के साथ संवाद करने को उत्सुक हुआ।

उसकी नजर उसी आकृति पर स्थिर थी कि तभी उस प्रेतात्मा ने उससे कहा—'मित्र! सुप्रभातम्!' उस व्यक्ति ने भी प्रत्युत्तर में उस प्रेतात्मा का उसी तरह से अभिवादन किया। फिर वह प्रेतात्मा धाराप्रवाह अँगरेजी में उस व्यक्ति के साथ बातें करने लगी। उस प्रेतात्मा की आवाज कठोर और पुरुष जैसी थी।

तभी उस व्यक्ति ने उस प्रेतात्मा से पूछा—"आपने किस हेतु प्रेरित होकर मेरे समक्ष प्रकट होने का सोचा?" "मनुष्य की संगति से प्रेम होने के कारण।"—उस प्रेतात्मा ने उत्तर दिया। उस व्यक्ति ने पुनः पूछा—"पर क्या आप मुझे बताएँगे

कि पूर्वजन्म में आप कौन थे ? और आप प्रेत-योनि में कब से पड़े हुए हैं ?"

प्रेतात्मा ने उत्तर दिया—"हाँ, क्यों नहीं ? मैं यहाँ नजदीक के शहर में एक सुंदर होटल चलाता था। मैं काफी शिक्षित था। मैं उन भाग्यशाली प्रेतात्माओं में से एक हूँ, जिन्हें अपने भूतकाल का ज्ञान है। मेरा शरीर आठ वर्ष पूर्व ही नष्ट हो गया था।" व्यक्ति ने फिर पूछा—"क्या मृत्यु से पूर्व भी आपको भूतकाल का ज्ञान था ?" प्रेतात्मा ने कहा—"नहीं! मेरे स्थूलशरीर के नष्ट होने के बाद ही मुझमें वह शक्ति आई।"

व्यक्ति ने प्रश्न किया—"आप भूतकाल में कितनी दूर तक का देख सकते हैं ?" प्रेतात्मा ने उत्तर दिया—"मुझे मेरे पाँच पूर्वजन्मों का ज्ञान है।" व्यक्ति ने पूछा—"क्या आप दूसरों के भूतकाल को ज्ञात करने की शक्ति रखते हैं ?" प्रेतात्मा ने बताया—"नहीं। पर हाँ, कभी-कभी ऐसी जानकारियाँ भी मुझमें उदीप्त हो जाती हैं।"

व्यक्ति ने प्रश्न किया—"आपने अपनी मृत्यु के बाद किस प्रकार के परिवर्तन को अनुभव किया ?" प्रेतात्मा ने बताया—"अपने स्थूलशरीर के संबंधों का क्षय और परिणामस्वरूप मैंने पार्थिव चीजों का उपयोग या उपभोग करने की अशक्ति महसूस की।" व्यक्ति ने प्रश्न किया—"आप जैसे भूत-प्रेत कहाँ रहते हैं ?"

प्रेतात्मा ने कहा—"हमारे शरीर हवामय होते हैं, इसलिए हमें किसी खास जगह पर रहना जरूरी नहीं होता, लेकिन हमारी पूर्व आदतों के कारण हम वृक्षों, मंदिरों, तालाबों, कब्रों, श्मशानों, गिरजाघरों, किलों, गुफाओं, ऊँची पहाड़ियों और सुनसान स्थानों और वनों आदि में घूमते रहते हैं।" प्रेतात्मा ने आगे कहा—"कभी-कभी हम मनुष्य अथवा पशुओं के शरीरों में प्रवेश करके भी रहते हैं। कई उच्च कोटि की प्रेतात्मा स्वर्गीय और उच्च लोकों में भी रहती हैं।" "आप मनुष्य या पशु के शरीर में क्यों और कब रहना पसंद करते हैं ?"—उस व्यक्ति ने प्रश्न किया।

प्रेतात्मा ने कहा—"जिनको पृथ्वी की ओर खिंचाव, लगाव होता है, जिनकी सांसारिक वासनाएँ बहुत ज्यादा प्रबल होती हैं और वे उन सुषुप्त वासनाओं की तृप्ति करना चाहते हैं, तब ऐसी प्रेतात्माएँ जीवित मानव शरीर या पशु के शरीर में प्रवेश कर जाती हैं। ज्यादातर जिनको वे भूतकाल अर्थात अपने पूर्वजन्म में चाहती थीं, वे उनके शरीर में प्रविष्ट होना पसंद करती हैं।"

प्रेतात्मा ने आगे कहा—"अगर मानव अथवा पशु पहले से बिलकुल अलग तरीके से बरताव करने लगे तो आप यह समझ लो कि किसी प्रेतात्मा ने उसके शरीर पर कब्जा जमा लिया है और पूर्व में जो जीव उसमें रहता था उस जीव को उसने भगा दिया है।" "पर क्या सभी प्रेतात्माएँ आकाश में और उच्च ग्रहों पर स्वेच्छाचारपूर्वक भ्रमण करने की शक्ति रखती हैं ?"—उस व्यक्ति ने पूछा।

प्रेतात्मा ने कहना जारी रखा—"जिन्हें इस पृथ्वी पर फिर से जन्म लेना पड़ता है, ऐसी प्रेतात्माएँ पृथ्वी की एक खास हद के उस पार के ऊर्ध्वगामी प्रदेशों में गति, विहार नहीं कर सकती हैं। जो प्रेतात्माएँ इस भौतिक जगत् से छूटकर स्वर्गलोक में जाने के लिए बनी होती हैं, वे उस विशाल आकाश में और दूर-दूर के लोकों में भ्रमण कर सकती हैं। हाँ, कभी-कभी वे पृथ्वी के उच्च कोटि के व्यक्तियों के साथ संपर्क साधने के लिए नीचे उतर आती हैं।"

व्यक्ति ने प्रश्न किया—"क्या प्रेतात्माएँ मनुष्य को मदद करने की, बीमारी से मुक्त करने की या उनको परेशान करने की शक्ति धारण करती हैं ?" प्रेतात्मा ने कहा—"हाँ! अवश्य, हमारे शरीर सूक्ष्म हवामय होते हैं, इसलिए हम अशरीरी होते हुए भी

शरीरधारी प्राणियों की भलाई अथवा बुराई करने में ज्यादा स्वतंत्र होते हैं और वह कार्य हम ज्यादा तेजी से तथा सुगमता से कर सकते हैं। यह बात मनुष्यों की दुनिया में जैसी होती है, वैसी ही हमारी दुनिया में भी होती है। सात्त्विक प्रकृति की प्रेतात्मा कभी भी किसी को परेशान नहीं करती हैं।''

प्रेतात्मा ने आगे कहा—''वे दूसरों की मदद करने में रुचि रखते हैं। वे सत्त्वप्रधान मनुष्यों का साहचर्य करने की भी इच्छा रखते हैं, जिससे उन्हें प्रेतयोनि से मुक्त होने में मदद मिले। वे ऐसे स्थलों की मुलाकात अथवा भ्रमण करने की लालसा रखते हैं, जहाँ का वातावरण ऊर्ध्वगामी और प्रेरक हो। मैं एक ऐसी ही सात्त्विक प्रेतात्मा के बारे में आपको बताता हूँ।''

प्रेतात्मा ने बताया—''एक समय पर भगवान शंकर के मंदिर में गाए जाते स्तोत्र-स्तवन को सुनकर एक सात्त्विक प्रेतात्मा आकर्षित होकर उस मंदिर में गई। उसने खुश होकर शिवलिंग पर चढ़ाई हुई फूलमाला को उस स्तोत्र के गायक भक्त के गले में पहना दिया। वहाँ मौजूद लोगों को इससे बहुत आश्चर्य हुआ, लेकिन उस दिन से ही उस गायक-भक्त और शिवालय की लोकप्रियता में अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी हो गई।''

इस प्रकार उस व्यक्ति और प्रेतात्मा के बीच घंटों संवाद होता रहा। उस व्यक्ति ने अन्य कई प्रश्न किए और उस प्रेतात्मा ने उनके उत्तर दिए। फिर वह प्रेतात्मा अदृश्य हो गई। सचमुच कितनी विचित्र है अदृश्य सत्ताओं की दुनिया। ❑

महाराज विक्रांत एक जंगल में भटक गए। भूख-प्यास से बेहाल थे। ऐसे में एक किसान ने उनको शरण दी, उनकी आवभगत की व उन्हें भोजन-पानी उपलब्ध कराया। कृतज्ञ राजा ने किसान से कहा—''जीवन में कभी किसी परेशानी में घिरे तो निस्संकोच मेरे पास आना, जो बन सकेगा करूँगा।''

कुछ महीनों पश्चात किसान को लगा कि अब ऐसी विषम घड़ियाँ आ गई हैं, जब महाराज से सहायता माँगने की आवश्यकता है। इस भाव से वह महाराज से मिलने पहुँचा। महाराज उस समय राजमंदिर में बैठे ध्यान कर रहे थे। किसान ने द्वारपाल से पूछा—''महाराज अंदर क्या कर रहे हैं ?''

द्वारपाल ने कहा—''महाराज भगवान से कुछ माँग रहे हैं।'' यह सुनकर किसान को लगा कि जब महाराज भी भगवान से माँग रहे हैं तो मैं भी उनसे ही कुछ क्यों न माँगूँ ? महाराज ने किसान को लौटते देखा तो उन्होंने उसे रोका और आने व जाने का कारण पूछा। किसान ने उत्तर दिया—''महाराज आया तो माँगने था, पर अब उसी शक्ति से माँगूँगा, जिससे आप भी माँगते हैं।''

नैतिक बल—वैयक्तिक एवं सामाजिक प्रगति का ठोस आधार

जीवन में नैतिक बल का अपना महत्त्व है। नैतिक बल के आधार पर ही हम जीवन की चुनौतियों का सामना कर पाते हैं, समाज के अवांछनीय प्रवाह का सामना करते हुए उसे नई एवं अनुकूल दिशा दे पाते हैं।

एक भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति कैसे ईमानदारी की बात कर सकता है, औचित्य के पक्ष में धर्मयुद्ध कर सकता है, क्योंकि वह उस नैतिक बल से सर्वथा हीन होता है, जिसके आधार पर सत्य, ईमान एवं धर्म का भव्य भवन खड़ा किया जा सके।

जिसने किसी तरह जोड़-तोड़कर अपने वर्चस्व का मायावी महल खड़ा किया हो, वह सत्य व धर्म की आग की चिनगारी के साथ खेलने का दुस्साहस नहीं कर सकता, क्योंकि इनका एक झोंका उसके तथाकथित भव्य भवन को राख कर सकता है।

फिर एक चोर दूसरे चोर को चोरी करने से नहीं रोक सकता। कहावत भी प्रख्यात है कि चोर-चोर मौसेरे भाई। जहाँ सत्य, धर्म, संवेदना से न्यून, स्वार्थ एवं अहंकारकेंद्रित ऐसे लोगों का जमावड़ा इकट्ठा हो जाता है, उस समाज का ठहराव की जड़ता में जकड़ जाना तय है और वह कलह-क्लेश, अशांति, अराजकता एवं विखंडन का उर्वर आधार बन जाता है; जबकि समाज में स्थिरता, विकास, उत्कर्ष एवं शांति का ठोस आधार—नैतिक बल से युक्त नेतृत्व एवं इसके जागरूक एवं समझदार नागरिकों का बाहुल्य ही हो सकता है।

सामाजिक जीवन की भाँति वैयक्तिक जीवन में भी नैतिकता का अपना महत्त्व है। इसी के आधार पर व्यक्ति की बिखरी हुई शक्तियाँ संगठित होती हैं, आत्मविश्वास जाग्रत होता है, आत्मसम्मान का भाव पुष्ट होता है तथा जीवन में नैतिक बल का संचार होता है, जो प्रकारांतर में अध्यात्म की उच्चस्तरीय कक्षा में प्रवेश का आधार बनता है। इस तरह नैतिकता आध्यात्मिक जीवन की नींव का काम करती है—यह इसका प्रवेश द्वार है। महर्षि पतंजलि के योग दर्शन में यम-नियम का प्रथम चरण इसी सत्य को इंगित करता है।

नैतिकता के आधार पर ही व्यक्ति के जीवन में सुख-शांति एवं सच्ची सफलता के प्रसून खिलते हैं और समाज में नेतृत्व की क्षमता का विकास होता है। नैतिक बल के आधार पर ही व्यक्तित्व में उस विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता का उभार होता है, जो सहज रूप में उसे जनता के हृदय में स्थान दिला सके।

अनैतिक, भ्रष्ट, धूर्त और धनबल एवं बाहुबल से संपन्न नेतृत्व का प्रभाव अस्थायी रहता है। आए दिन लोकतांत्रिक चलन में चुनाव के दौरान ऐसे नेताओं का तख्तापलट होते देखा जा सकता है। नैतिक बल ही जनता के हृदय में प्रवेश का द्वार खोलता है। इसी के आधार पर वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में प्रगति एवं उत्कर्ष की पटकथा लिखी जा सकती है।

इसी के बल पर भारत कभी विश्ववंदित हुआ था और इसी आधार पर भारत के उदय की गौरव गाथा लिखी जा सकती है और इसी नैतिकता की पराकाष्ठा एवं अध्यात्म के आधार पर आने वाले दिनों में भारत विश्व का सिरमौर बनने की चाहत रखता है। ❑

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार–202

शैक्षणिक तकनीकों पर शोध

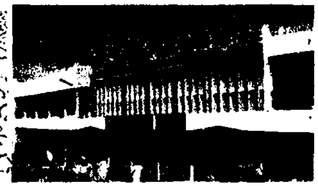

मनुष्य जीवन में सीखने की क्षमता, उसकी सफलता और सार्थकता का महत्त्वपूर्ण घटक है। सीखने की प्रवृत्ति यदि विकसित हो, तो व्यक्ति अपने जीवन में आस-पास, कहीं से भी, कुछ-न-कुछ सीख सकता है। मानवीय शिक्षा का महत्त्वपूर्ण आधार भी यही प्रवृत्ति है, जो शैक्षणिक उद्देश्यों को पूरा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहती है। शिक्षा जगत् में सीखने की प्रवृत्ति को लेकर अनेक तरह की अवधारणाओं, सिद्धांतों और तकनीकों पर सदा से चिंतन होता रहा है।

इन सभी में सीखने की प्रवृत्ति के मूल कारकों, प्रभावों, सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं व विकसित करने वाली प्रक्रियाओं को सम्मिलित कर शिक्षा के उद्देश्यों को व्यापक बनाने का प्रयास सदैव गतिशील रहा है। सामान्यतया सीखने की प्रवृत्ति व्यक्ति में जन्मजात होती है।

वह अपने अनुभवों, क्षमताओं, दृष्टिकोण, रुचि, सफलता, असफलता, परिवेश, पर्यावरण आदि अनेक पहलुओं से सीखता है और सीखे गए अनुभवों का अपनी सफलता के लिए उपयोग कर पाता है, परंतु विद्यार्थी जीवन में सीखने की प्रवृत्ति का एक विशेष लक्ष्य होता है, शिक्षा में उपलब्धि और व्यक्तित्व में समग्रता का विकास।

यही कारण है कि शिक्षाविदों ने सीखने की प्रवृत्ति पर बल देते हुए इसे विकसित बनाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण चिंतन किया है। उनकी दृष्टि में सीखने की तकनीकों का उपयोग कर विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्तियों को विकसित बनाया जा सकता है। साथ ही यह भी देखा जा सकता है कि सीखने की प्रवृत्ति नकारात्मक है या सकारात्मक और साथ ही इस सीखने की अभिवृत्ति का मापन भी किया जा सकता है।

विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्ति में मुख्य भूमिका उनके दृष्टिकोण की होती है। दृष्टिकोण की भिन्नता के कारण ही विद्यार्थियों की किसी एक भी व्यक्ति, वस्तु या घटना के पीछे भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएँ होती हैं। व्यक्तित्व कौशल और शैक्षणिक प्रदर्शन में भी सीखने की प्रवृत्ति और दृष्टिकोण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

सकारात्मक दृष्टिकोण सीखने की प्रवृत्ति को विकसित कर सीखने के परिणामों में सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करता है। इन परिणामों से बहुत हद तक विद्यार्थी के व्यक्तित्व और अंतर्भावों का भी पता चल जाता है, परंतु इसका दूसरा पहलू यह भी है कि अंतर्भावों का, भीतर की इच्छाओं का प्रभाव दृष्टिकोण पर भी पड़ता है और इससे सीखने की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से परिवर्तित हो जाती है। अतः सीखने के दृष्टिकोण से संबंधित इन सभी कारकों को ध्यान में रखकर ही सीखने के नियमों, सिद्धांतों आदि का निर्माण किया जाता है।

सीखने के अंतः-बाह्य सभी कारणों को आधार बनाकर ही विद्यार्थी के सीखने के प्रति दृष्टिकोण की ज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं व्यावहारिक पहलुओं की व्याख्या-विवेचना करना संभव हो पाता है। इसी को ध्यान में रखकर ही विद्यार्थी की शिक्षण-प्रक्रिया में उसके सीखने के दृष्टिकोण को संशोधित या परिवर्तित करने के लिए अनेक

रणनीतियों एवं तकनीकों का उपयोग किया जाता है, जैसे—सकारात्मक सुदृढ़ीकरण तकनीक, उपेक्षा तकनीक, मॉडलिंग तकनीक, दंड तकनीक, टाइम-आउट तकनीक, आकार देने की तकनीक आदि।

इन तकनीकों की सहायता से विद्यार्थियों में सीखने के दृष्टिकोण में आवश्यक परिवर्तन कर उनके शैक्षणिक स्तर एवं व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया में गुणवत्ता उत्पन्न करना संभव हो पाता है।

विद्यार्थियों में सीखने के दृष्टिकोण को लेकर विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार में एक महत्त्वपूर्ण शोध-अध्ययन का कार्य संपन्न किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सीखने की प्रवृत्ति तथा शैक्षणिक उपलब्धि और भावनात्मक बुद्धिमत्ता के सह-संबंध व प्रभावों का अध्ययन करना है।

यह अध्ययन विश्वविद्यालय के शिक्षाशास्त्र विभाग के अंतर्गत वर्ष-2021 में शोधार्थी रिंपी द्वारा श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ0 प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ0 ममता अरोरा के निर्देशन में पूर्ण किया गया है। इस विशिष्ट शोध का शीर्षक है—**'अ स्टडी ऑफ लर्निंग एट्टीट्यूड एंड इट्स इफेक्ट ऑन एजुकेशनल अचिवमेंट एंड इमोशनल इंटेलिजेन्स ऑफ बी-एड० स्टूडेन्टस।'**

शोधार्थी द्वारा इस सर्वेक्षणात्मक एवं वर्णनात्मक विधि पर आधृत शोध अध्ययन में विशेष रूप से बी-एड0 के विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक प्रक्रिया में सम्मिलित किया गया है। शोधार्थी का मत है कि बी-एड0 के विद्यार्थी के लिए सीखने का दृष्टिकोण, उनके शैक्षिक क्षेत्रों एवं भावी विकास का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। अधिकतम शैक्षणिक उपलब्धि की प्राप्ति में इस क्षमता के विकास का अत्यंत महत्त्व है।

शोध के प्रयोगात्मक पक्ष को पूरा करने के लिए उत्तराखंड राज्य के ऊधमसिंह नगर और नैनीताल जिलों के शासकीय व गैर-शासकीय महाविद्यालयों, संस्थानों से बी-एड0 विषय में अध्ययनरत कुल 600 विद्यार्थियों को यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा चयनित किया गया।

छात्र एवं छात्राओं दोनों को सम्मिलित रखा गया। नैनीताल एवं ऊधमसिंह नगर के कुल 16 शिक्षण संस्थानों से इन विद्यार्थियों का चयन किया गया और शोधार्थी द्वारा सभी को इस विशिष्ट शोध अध्ययन से संबंधित आवश्यक जानकारी प्रदान की गई। प्रयोग आरंभ करते हुए शोधार्थी द्वारा शोध उपकरणों को प्रयुक्त कर महत्त्वपूर्ण तथ्यों, जानकारियों को प्राप्त करने की प्रक्रिया अपनायी गई। शोध-आँकड़ों को एकत्रित करने के लिए जिन उपकरणों को प्रयुक्त किया गया वे हैं—

(1) लर्निंग एट्टीट्यूड क्वेश्चनार-शोधार्थी द्वारा निर्मित,

(2) एस0के0 मंगल एवं शुभ्रा मंगल द्वारा निर्मित मंगल इमोशनल इन्टेलिजेन्स इन्वेन्ट्री तथा

(3) वी. वी. मलाया द्वारा तैयार एडल्ट एजुकेशनल अचीवमेंट टेस्ट (AEAT-M)।

शोध के प्रथम उपकरण सीखने की प्रवृत्ति का उपयोग इस उद्देश्य से किया गया कि जाना जा सके कि विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्ति के विभिन्न स्तर अन्य क्षेत्रों जैसे भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शैक्षिक उपलब्धि को कैसे प्रभावित करते हैं। द्वितीय उपकरण का उद्देश्य छात्रों में अपनी भावनाओं के प्रति सजगता और प्रबंधन तथा दूसरों की भावनाओं की समझ व प्रबंधन की क्षमता को पहचानना था। तृतीय उपकरण का उपयोग युवा छात्रों द्वारा विभिन्न विषयों में सामान्य और अर्जित ज्ञान के उपलब्धि स्तर की जाँच करना था।

शोध प्रक्रिया के निर्दिष्ट मानदंडों के अनुरूप शोधार्थी द्वारा तथ्यों, आँकड़ों एवं जानकारियों को एकत्रित कर सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया।

शोध परिणाम के रूप में यह पाया गया कि सीखने की प्रवृत्ति व सीखने के दृष्टिकोण तथा भावनात्मक बुद्धिमत्ता एवं शैक्षणिक उपलब्धि में सह-संबंध है।

सीखने की प्रवृत्ति को विकसित कर शैक्षणिक उपलब्धि व भावनात्मक बुद्धिमत्ता में सार्थक अंतर उत्पन्न किया जा सकता है। इसमें शिक्षण की प्रक्रिया, स्थान व संस्थानों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। शोधार्थी द्वारा अपने इस विशिष्ट शोध अध्ययन के परिणामों व निष्कर्षों के आधार पर शोध के महत्त्वपूर्ण एवं व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत किए हैं, जैसे—बी-एड0 विषय के शिक्षक-प्रशिक्षकों को ऐसी शैक्षणिक व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे प्रत्येक विद्यार्थी को उत्तम शिक्षा और उच्च उपलब्धि प्राप्त करने में सहायता मिलती हो।

इसी प्रकार नीति-निर्माताओं को भी ऐसी नीतियाँ बनानी चाहिए, जो सरकारी या निजी शिक्षा संस्थानों में आवश्यक परिवर्तन ला सकें और समाज में उनकी स्थिति को अधिक गुणवत्तापूर्ण बना सकें।

शोधार्थी के अनुसार शिक्षकों द्वारा भी उपयोगी प्रतिक्रिया एवं जानकारी अपने संस्थानों के साथ साझा कर समस्या-समाधान व गुणवत्ता बढ़ोत्तरी में सहभागिता करनी चाहिए।

इसके साथ ही अभिभावकों को भी अच्छे संस्थानों का चयन कर छात्र की सीखने की प्रवृत्ति तथा उसके शैक्षणिक उपलब्धियों के स्तर में सुधार की दृष्टि रखनी चाहिए। उक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्ति और सीखने के दृष्टिकोण को प्रभावित करने वाले कारकों में आवश्यक परिवर्तन कर शैक्षणिक उपलब्धि एवं व्यक्तित्व कौशल में सार्थक प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। सीखने की प्रवृत्ति को आधार बनाकर शिक्षा की गुणवत्ता, सफलता के लिए सार्थक प्रयास किए जा सकते हैं। ❑

महाकवि माघ प्रसिद्ध कवि होने के अतिरिक्त एक उदारचेता महामानव भी थे। उनके साथ उनके परिवार के हर सदस्य के अंदर भी उदारता की यह भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी। एक बार एक निर्धन व्यक्ति उनसे सहायता माँगने पहुँचा। उसे अपनी पुत्री का विवाह करना था, पर उसके पास अपेक्षित धनराशि का अभाव था।

उसकी व्यथा सुनकर माघ चिंतित हो गए; क्योंकि उनके पास भी इतना धन न था, जिससे वे उस व्यक्ति की सहायता कर पाते। माघ को चिंतातुर देख उनकी माँ ने अपने कान के कुंडल उतारकर उनके हाथ पर रख दिए, ताकि उनका उपयोग कर माघ उस व्यक्ति की आर्थिक सहायता कर सकें।

माघ उन कुंडलों को अपने हाथ में ले पाते कि तब तक उनकी पत्नी ने भी अपने हाथ के कड़े उतारकर माघ के हाथों में रख दिए और बोली—"माँ के कुंडल इतने बड़े कार्य के लिए पर्याप्त न होंगे, आप मेरे कड़े भी ले लें।" घर आया निर्धन व्यक्ति माघ एवं उनके परिवार की उदारता के आगे नतमस्तक हो गया।

युगगीता – 308

कर्त्तापन से रहित, फलेच्छा से रहित कर्म है सात्त्विक कर्म

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की तेईसवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के बाईसवें श्लोक की विवेचना इससे पूर्व की किस्त में की गई थी। इस श्लोक में श्रीभगवान कहते हैं कि जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य एक कार्यरूप शरीर में ही संपूर्ण आसक्त रहता है तथा जो युक्तिरहित, वास्तविक ज्ञान से रहित और तुच्छ है—वह तामस कहा गया है। चूँकि तम भाव, मूढ़ता का भाव माना गया है, इसलिए ऐसा व्यक्ति उत्पन्न और नष्ट होने वाले इस जड़ शरीर को ही अपना स्वरूप मानकर बैठ जाता है। यह वस्तुतः ज्ञान न होकर अज्ञान है, इसीलिए श्रीभगवान ने इसे ज्ञान शब्द से नहीं पुकारा है। वे यहाँ कहते हैं कि तामस भाव वाला मनुष्य एक ही शरीर में संपूर्ण आसक्ति लगाकर बैठ जाता है और इस जन्म लेने वाले, नष्ट होने वाले शरीर को ही अपना स्वरूप मानकर बैठ जाता है। भगवान कृष्ण कहते हैं कि ऐसी मान्यता मूढ़ता के कारण ही होती है।

ऐसा व्यक्ति इस वास्तविक ज्ञान से रहित होता है कि वस्तुतः शरीर और आत्मा अलग-अलग हैं। इसलिए भगवान कहते हैं कि ऐसे भाव वाला मनुष्य युक्ति से रहित और तुच्छ होता है। यह एक तरह का मूढ़ भाव है, इसलिए भगवान ने इस श्लोक में ज्ञान शब्द का प्रयोग न करते हुए 'यत्' और 'तत्' पद से काम चलाया है। यह मूढ़ भाव ही तामस भाव है।]

इसके बाद श्रीभगवान कहते हैं कि—

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम्।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते॥ 23॥

शब्दविग्रह—नियतम्, सङ्गरहितम्, अरागद्वेषतः, कृतम्, अफलप्रेप्सुना, कर्म, यत्, तत्, सात्त्विकम्, उच्यते।

शब्दार्थ—जो (**यत्**), कर्म (**कर्म**), शास्त्र विधि से नियत किया हुआ (और) (**नियतम्**), कर्त्तापन के अभिमान से रहित हो (तथा) (**सङ्गरहितम्**), फल न चाहने वाले पुरुष द्वारा (**अफलप्रेप्सुना**), बिना राग द्वेष के (**अरागद्वेषतः**), किया गया हो (**कृतम्**), वह (**तत्**), सात्त्विक (**सात्त्विकम्**), कहा जाता है (**उच्यते**)।

अर्थात जो कर्म शास्त्रोक्त विधि से नियत और कर्त्तापन के अभिमान से रहित हो तथा फल न चाहने वाले मनुष्य द्वारा बिना राग-द्वेष के किया गया हो, वह सात्त्विक कहा जाता है। यहाँ श्रीभगवान ने शब्द प्रयोग किया है—नियत, जिसका अर्थ है कि वह कर्म उसी व्यक्ति के द्वारा होना समीचीन है।

उदाहरण के तौर पर किसी परिकर में निवास करने वालों की संख्या अगणित हो सकती है, परंतु

वहाँ किसी को प्रवेश करने से रोकने या उच्युत करने के लिए वहाँ का सुरक्षा गार्ड ही नियत होता है।

युद्ध के समय में आक्रमण का आदेश देने के लिए सेनापति या सेनाध्यक्ष ही नियत होता है, चिकित्सालय में रोगी को कौन-सी दवा देनी है, ये करने के लिए चिकित्सक ही नियत होता है, वैसे ही श्रीभगवान कहते हैं कि जिस व्यक्ति के लिए परिस्थिति-अनुसार जो शास्त्रों में कहा है—वह करना 'नियत' हो जाता है।

नियत कह देने से जो करने योग्य कर्म हैं, वो तो स्पष्ट ही हो गए हैं, साथ ही यह भी स्पष्ट हो गया है कि क्या नहीं करना चाहिए। जैसे बोलचाल की भाषा में 'टू डू' और 'टू डोंट' स्पष्ट होते हैं, वैसे ही भगवान कृष्ण के ये कहने के साथ कि करने योग्य तो ये कर्म हैं, जो शास्त्रविहित हैं और न करने योग्य में वे कर्म हैं, जिन्हें कर्त्ताभाव के अभिमान से रहित होकर किया जाए।

योगेश्वर कृष्ण कहते हैं कि '**संगरहितम्**' अर्थात वह शास्त्रोक्त कर्म निरभिमानता के साथ किया जाए। साथ ही वे कहते हैं कि ऐसा कर्म फल की इच्छा से भी रहित हो '**अफलप्रेप्सुना**' एवं बिना राग व द्वेष के किया गया हो '**अरागद्वेषतः कृतम्**' तब वह सात्त्विक हो जाता है।

श्रीमद्भगवद्गीता की आत्यंतिक पुकार ही निष्काम कर्मयोग की है, जिसमें कर्म करने का अभिमान न हो, फल पाने की कामना न हो—ऐसा कर्म ही सात्त्विक होता है।

इसीलिए ईशावास्योपनिषद् में ऋषि कहते हैं—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥ 2॥

अर्थात इस चराचर जगत् के कर्त्ता-धर्ता-हर्ता तो सर्वशक्तिमान परमेश्वर ही हैं, अतः सब कुछ उन्हीं को अर्पित करते हुए, सब कुछ उन्हीं का समझकर शास्त्रोक्त कर्त्तव्य कर्मों का आचरण करते हुए ही दीर्घ जीवन की अभिलाषा करनी चाहिए। यह जीवन ईश्वरप्रदत्त है, अपने भोग भोगने के लिए नहीं, वरन परमात्मप्रदत्त पथ का अनुगमन करने के लिए मिला है। ऐसा करने से ही कर्म, बंधन में नहीं डालते हैं। कर्म करते हुए कर्मों से लिप्त न होने का यही एकमात्र मार्ग है।

इसी के साथ भगवान कृष्ण ये भी कहते हैं कि ऐसे कर्म राग-द्वेष से रहित हों, तभी वो सात्त्विक कर्म कहलाएँगे। 'राग' की व्याख्या करते हुए व्यास कहते हैं कि '**सुखाभिज्ञस्य सुखानुस्मृतिपूर्वः सुखे तत्साधने वा यो गर्धस्तृष्णा लोभः स राग इति।**' अर्थात सुखानुभव की स्मृतिपूर्वक सुख या सुख देने वाले पदार्थ के प्रति जो लोभ या लोलुपता होती है, वह राग है।

इसी क्रम में दुःखानुभव की स्मृतिपूर्वक दुःख या दुःख देने वाले साधनों के प्रति जो प्रतिहिंसा होती है—वह द्वेष है। यों देखा जाए तो कर्म करने के अभिमान से रहित, फल पाने की इच्छा से रहित, लोलुपता और द्वेष से रहित जो कर्म हैं—वो ही सात्त्विक कर्म हैं और उनको करने के अतिरिक्त कर्मबंधन से मुक्ति का कोई मार्ग नहीं है। ❑

सूचना

सभी भाइयों से निवेदन है कि पत्र व्यवहार में ई-मेल व व्हाट्सएप भेजने में अपने मोबाइल नंबर, व्हाट्सएप नंबर, ई-मेल, पिनकोड का उल्लेख अवश्य करें, ताकि समय से सूचना का आदान-प्रदान हो सके।

विश्वविद्यालय परिसर से –247

राष्ट्र-निर्माण की भूमिका लिखता विश्वविद्यालय

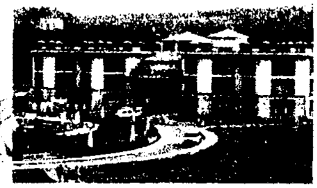

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में 'राष्ट्र के निर्माण में मीडिया की भूमिका' विषय पर एक भव्य राष्ट्रीय मीडिया सम्मेलन का आयोजन सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस सम्मेलन का उद्देश्य मीडिया जगत्, समाज और शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय चिंतकों, विद्वानों एवं पत्रकारों को एक मंच पर लाकर राष्ट्र-निर्माण में मीडिया की भूमिका, जिम्मेदारी और चुनौतियों पर गहन संवाद स्थापित करना था। कार्यक्रम का शुभारंभ दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। इसके पश्चात देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने स्वागत उद्बोधन प्रस्तुत किया।

अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा कि मीडिया केवल सूचना और मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज का दिशा-निर्देशक माध्यम है। मीडिया के पास समाज के विचार, संस्कृति और चरित्र को गढ़ने की अपार शक्ति है, अत: इसे अपने दायित्व को सदैव राष्ट्रहित और जनकल्याण के परिप्रेक्ष्य में निभाना चाहिए।

उन्होंने आगे कहा कि मीडिया का सशक्त और सकारात्मक उपयोग तभी संभव है, जब उसमें नैतिकता, सत्यनिष्ठा और सेवा-भाव निहित हो। इसी के साथ उन्होंने यह भी स्मरण कराया कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रेरणास्रोत पूज्य गुरुदेव ने अपने लेखों और विचारों में पत्रकारिता को विचार क्रांति का माध्यम बताया था। पूज्यवर के अनुसार मीडिया को समाज में विचारों की शुद्धता, सद्भावना और नैतिक जागरूकता फैलाने का कार्य करना चाहिए।

सम्मेलन के मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित माननीय श्री दत्तात्रेय होसबोले जी ने अपने सारगर्भित विचारों में कहा कि मीडिया किसी भी समाज की आत्मा का प्रतिबिंब होता है। जिस राष्ट्र की मीडिया सशक्त, संवेदनशील और मूल्यनिष्ठ होती है, उस राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होता है। पत्रकारिता का उद्देश्य समाज में चेतना, एकता और जिम्मेदारी का विकास करना होना चाहिए।

वरिष्ठ पत्रकार एवं पूर्व सूचना आयुक्त श्री उदय माहूरकर जी ने पारदर्शिता, सत्य और नैतिकता को मीडिया की आत्मा बताया। उन्होंने कहा कि सूचना का अधिकार तभी सार्थक बन सकता है, जब पत्रकारिता निष्पक्ष, निर्भीक और राष्ट्रहित से प्रेरित हो। उन्होंने युवा पत्रकारों से आग्रह किया कि वे केवल समाचार देने तक सीमित न रहें, बल्कि समाज को सोचने, जागने और सशक्त बनने की दिशा में प्रेरित करें।

सुदर्शन न्यूज के मुख्य संपादक श्री सुरेश चव्हाणके जी ने मीडिया के वर्तमान परिदृश्य और उसकी जिम्मेदारियों पर विस्तार से चर्चा की। उन्होंने कहा कि आज के डिजिटल युग में मीडिया की गति तो तेज हुई है, परंतु दिशा का निर्धारण उतना ही महत्त्वपूर्ण है। पूर्व सांसद एवं वरिष्ठ संपादक श्री तरुण विजय जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि भारतीय परंपरा में पत्रकारिता सदैव लोक-कल्याण, सत्य और धर्म की रक्षा के लिए रही है।

कैप्टन प्रवीण चतुर्वेदी, संस्थापक एवं सीईओ, प्राच्यम स्टूडियोज ने अपने अनुभव साझा करते हुए बताया कि भारतीय संस्कृति, परंपरा और मूल्यों को पुन: जनमानस तक पहुँचाने में डिजिटल मीडिया की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हिमालय पर्यावरण संवाद का भव्य आयोजन संपन्न हुआ। कार्यक्रम का उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण के प्रति समाज में जागरूकता लाना रहा। कार्यक्रम का शुभारंभ वैदिक मंगलाचरण और दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने पुष्प-गुच्छ भेंट कर सभी विशिष्ट अतिथियों का स्वागत किया।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में प्रतिकुलपति जी ने कहा कि प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व ही मानवता के उज्ज्वल भविष्य की गारंटी है। हिमालय और जल संरक्षण केवल एक पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं, बल्कि मानवता के आध्यात्मिक कर्त्तव्यों में से एक है। विकास का वास्तविक अर्थ तभी सार्थक है, जब वह प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखते हुए कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे।

मुख्य अतिथि, भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु-परिवर्तन मंत्री माननीय श्री भूपेंद्र यादव जी ने अपने प्रेरणादायी संबोधन में कहा कि हिमालय केवल पर्वत नहीं, बल्कि जीवन का आधार है। यह नदियों, जैव-विविधता और जलवायु संतुलन का केंद्र है। इसकी रक्षा करना केवल सरकारों की नहीं, बल्कि समूचे मानव समाज की सामूहिक जिम्मेदारी है।

इस अवसर पर राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण के माननीय न्यायाधीश डॉ० अफरोज़ अहमद जी ने कहा कि नीति और व्यवहार में सामंजस्य स्थापित कर ही हम पर्यावरणीय न्याय सुनिश्चित कर सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि केवल नीतियाँ बनाना पर्याप्त नहीं है; जनमानस के जीवन व्यवहार में पर्यावरणीय संवेदना को जाग्रत करना सबसे आवश्यक है।

राष्ट्रीय परामर्श समिति के सदस्य श्री मनु गौड़ जी ने कहा कि नदियों की सुरक्षा भारतीय संस्कृति और सभ्यता की सुरक्षा का आधार है। भारतीय जीवनदर्शन में जल और जीवन का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है, इसलिए जल संरक्षण कोई तकनीकी नहीं, बल्कि अस्तित्व से जुड़ा प्रश्न है।

भारतीय नदी परिषद् के अध्यक्ष श्री रमनकांत जी ने कहा कि भारत का इतिहास और आध्यात्मिक परंपरा नदियों एवं प्रकृति से गहराई से जुड़ी हुई है। हमारे वेद, उपनिषद् और लोक परंपराएँ— सब यही सिखाते हैं कि प्रकृति के साथ आदरभाव का रिश्ता ही हमें सच्चा संतुलन प्रदान करता है।

इस अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय की हरित पहल को समर्पित एक विशेष कॉफी टेबल बुक का भी लोकार्पण मंचासीन अतिथियों द्वारा किया गया। यह पुस्तक विश्वविद्यालय परिसर में विद्यमान 4225 वृक्षों की जानकारी का सजीव दस्तावेज है, जिसमें उनके संरक्षण, प्रजातीय विविधता और पर्यावरणीय योगदान का विवरण संकलित किया गया है। यह विश्वविद्यालय की 'ग्रीन कैंपस' दृष्टि का प्रतीक है।

हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय सेवा योजना दिवस 2025 का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य युवाओं में राष्ट्रभक्ति, सेवा भावना और सामाजिक उत्तरदायित्व के संस्कारों को प्रबल करना था। समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में प्रतिकुलपति जी की प्रेरक उपस्थिति रही।

अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय सेवा योजना केवल प्रमाणपत्र प्राप्त करने का माध्यम नहीं, बल्कि युवाओं में निस्स्वार्थ सेवा की भावना जगाने का एक सशक्त साधन है। उन्होंने स्वयंसेवकों से कहा कि समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने हेतु अपने प्रयासों को सतत बनाए रखें। समापन सत्र के दौरान विजेताओं को प्रतिकुलपति जी द्वारा प्रमाणपत्र एवं स्मृतिचिह्न प्रदान कर सम्मानित किया गया।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में विश्व पर्यटन दिवस के उपलक्ष्य में विविध

कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए प्रतिकुलपति जी ने कहा कि सतत पर्यटन केवल पर्यावरण की रक्षा करने का साधन नहीं है, बल्कि यह स्थानीय समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण और सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण का एक प्रभावी माध्यम है। देव संस्कृति विश्वविद्यालय सदैव ऐसे शैक्षणिक और सांस्कृतिक प्रयास करता रहा है, जिनसे विद्यार्थियों में नैतिकता, जिम्मेदारी और सामाजिक चेतना का विकास हो। पर्यटन यदि संस्कार और संवेदना के साथ जोड़ा जाए, तो यह समाज में सतत रूपांतरण का साधन बन सकता है।

इस अवसर पर पूज्य गुरुदेव की पुस्तक 'तीर्थसेवन क्यों और कैसे?' से प्रेरणा लेते हुए पूज्यवर की हिमालय यात्रा से संबंधित एक विशेष आध्यात्मिक पर्यटन यात्रावृत्त का भी विमोचन किया गया। इस यात्रावृत्त में आध्यात्मिक पर्यटन के गूढ़ आयामों और साधना से जुड़े स्थलों के महत्त्व को रेखांकित किया गया।

हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में विश्व मानसिक स्वास्थ्य दिवस भी मनाया गया। समापन समारोह में प्रतिकुलपति जी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहे। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि सच्चा मानसिक स्वास्थ्य केवल बीमारी की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि विचारों, भावनाओं और कर्मों के बीच सामंजस्य का नाम है।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय एनीमेशन दिवस के अवसर पर एनीमेशन विभाग द्वारा कला एवं सशक्तीकरण विषय पर आधारित विविध कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस आयोजन का उद्देश्य युवा कलाकारों में सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करना, समाजोपयोगी विचारों को कला के माध्यम से प्रस्तुत करना और एनीमेशन कला को सामाजिक परिवर्तन के सशक्त माध्यम के रूप में पहचान दिलाना था।

प्रतिकुलपति जी ने विजेताओं को सम्मानित करते हुए कलात्मक अभिव्यक्ति की सराहना की और उन्हें कला को समाज के कल्याण के साधन के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि कला और एनीमेशन केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि संवेदना, शिक्षा और समाजोत्थान का प्रभावशाली माध्यम हैं।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में यूनेस्को की असिस्टेंट डायरेक्टर जनरल सुश्री गैब्रिएला रामोस का स्वागत प्रतिकुलपति जी द्वारा किया गया। इसके उपरांत उन्हें विश्वविद्यालय परिसर का भ्रमण कराया गया।

प्रस्थान से पूर्व प्रतिकुलपति जी ने उन्हें विश्वविद्यालय की ओर से एक स्मृतिचिह्न भेंट किया, जो परस्पर सहयोग और सम्मान का प्रतीक था। साथ ही देव संस्कृति विश्वविद्यालय में नीदरलैंड्स के साव्हा योगा स्कूल के 10 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल ने विश्वविद्यालय का भ्रमण किया एवं प्रतिकुलपति जी से भेंट की।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र एवं स्वयंसेवक श्री आलोक कुमार पांडेय को माई इंडिया- नेशनल सर्विस प्लान राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। यह प्रतिष्ठित सम्मान उन्हें नई दिल्ली स्थित राष्ट्रपति भवन में आयोजित एक भव्य समारोह में माननीय राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मु जी के करकमलों द्वारा प्रदान किया गया।

इस समारोह में देशभर के विभिन्न राज्यों से चयनित युवाओं को उनके असाधारण सामाजिक योगदान हेतु सम्मानित किया गया, जिनमें देव संस्कृति विश्वविद्यालय के स्वयंसेवक का नाम उत्तराखंड राज्य के लिए गर्व का विषय बना। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने स्वयंसेवक को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ प्रेषित कीं। ❑

कर्मों के अधीन है जीवन

लोककथाओं में एक रोचक कथा आती है। कथा महर्षि वेदव्यास के जीवन से संबंधित है। महर्षि वेदव्यास का एक निकटवर्ती शिष्य था। उसका नाम था—दास। वह उनकी अहर्निश सेवा करता था। वेदव्यास का भी दास के प्रति अत्यंत प्रीति व अनुराग था।

एक दिन दास के मन में विचार उठा कि मेरे गुरु तो सर्वज्ञ हैं, उनसे यह जानने का प्रयत्न करता हूँ कि मेरी आयु कितनी है ?

दास ने यह प्रश्न महर्षि से पूछा। महर्षि बोले—"वत्स! आयु कर्म के अधीन है। जब तक कर्म है, आयु है—इस विषय पर ज्यादा विचार न करते हुए, इसे परमात्मा के हाथ में ही छोड़ देना चाहिए। जब उनका आदेश होगा, तब यह पार्थिव शरीर त्याग देना।"

परंतु दास के मन में कुतूहल बना रहा। कुछ समय बाद उसने पुनः महर्षि के सम्मुख अपनी जिज्ञासा रखी। उसके बार-बार पूछने पर व्यास जी बोले—"पुत्र! मैं इस संदर्भ में ज्ञान नहीं रखता। इसका उत्तर यमराज से पूछना पड़ेगा।"

व्यास जी, दास को लेकर यमराज से मिलने पहुँचे। यमराज ने महर्षि का सत्कारपूर्वक स्वागत किया। महर्षि व्यास ने अपने शिष्य की जिज्ञासा उनके सम्मुख रखी।

यमराज बोले—"ऋषिवर! मैं तो संपूर्ण व्यवस्था रखता हूँ। मृत्यु का हिसाब तो मृत्युदेव रखते हैं।" ऐसा कहने के उपरांत यमराज, महर्षि व्यास व दास को लेकर मृत्युदेव के पास पहुँचे।

मृत्युदेव ने कहा—"महर्षि! मुझे तो मात्र जीवात्माओं को समय पूर्ण होने पर पकड़ कर लाने का अधिकार है। आयु लिखने का कार्य विधाता करते हैं।" सब मिलकर विधाता के पास पहुँचे और उनसे पूछा—"विधाता! आपने दास के माथे पर कितनी आयु लिखी है ?"

विधाता विस्मयपूर्वक बोले—"महर्षि! यह आपका शिष्य है। मुझे लगा कि इसके शरीर छोड़ने पर आपको कष्ट होगा तो मैंने इसके माथे पर यह लिख दिया था कि जिस दिन आप, दास, यमराज व मृत्युदेव मिलकर मुझसे मिलने आएँगे, उस घड़ी इसके प्राण निकलेंगे। मैंने सोचा था कि ऐसा शायद ही कभी हो, पर आज ऐसा भी हो गया।"

मनुष्य की आयु कर्मों के वश में आकर होती है और कर्म, समय आने पर अपने अनुकूल व्यवस्था भी बना ही लेते हैं। ❑

मूर्खस्य पञ्च चिह्नानि गर्वो दुर्वचनं तथा।
हठी चैव विषादी च परोक्तं नैव मन्यते॥

अर्थात मूर्ख व्यक्ति के पाँच लक्षण हैं—गर्व करना, दुर्वचन बोलना, हठ करना, कलह करना एवं दूसरों के कहे वचनों का पालन न करना।

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी

उपासना-साधना-आराधना

परमवंदनीया माताजी के उद्‌बोधनों में यह एक अलौकिक सामर्थ्य सुरक्षित है कि वे समाज के हर तबके को जाग्रत कर पाने का कार्य करते हैं। जहाँ एक ओर मनस्वी, उनके द्वारा प्रतिपादित आध्यात्मिक विषयों के सुगम समाधान को सुनकर कृतकृत्य हो उठते हैं तो वहीं सामान्य-साधारण लोग अपने जीवनमूल्यों की प्रतिष्ठा, उनके उद्‌बोधनों के आधार पर ही कर पाते हैं। अपने एक ऐसे ही प्रस्तुत उद्‌बोधन में वंदनीया माताजी उपासना-साधना एवं आराधना का मर्म समझाते हुए प्रत्येक साधक से कहती हैं कि यह आध्यात्मिक पथ मात्र उसके जीवन में प्रकाशित हो पाता है, जो अपने अंदर छिपी शक्ति को पहचान पाने की सामर्थ्य सुरक्षित रखता है। परमवंदनीया माताजी, पूज्य गुरुदेव का जीवंत उदाहरण देते हुए प्रत्येक गायत्री परिजन से कहती हैं कि उन्हें और भटकने की आवश्यकता नहीं और पूज्य गुरुदेव के जीवन को ही अपना आदर्श मानकर अपनी साधनात्मक प्रगति सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को ....।

संसार को सुंदर बनाएँ

तो उन दो मालियों का क्या हुआ? उसमें एक माली वो था जैसा मैं अभी आपसे संकेत कर रही थी। अपने बच्चों के लिए यह बताना जरूरी है, इनको बुरा लगेगा तो लग जाएगा, लेकिन असलियत तो मुझे बतानी है।

तो बेटे, एक माली जो था, उसने राजा का चित्र चौकी पर लगा रखा था। जरा भी धूल लग जाए तो झाड़-पोंछकर रख दे। फिर सुबह भी आरती, शाम को भी आरती, दोपहर को भी आरती, बस, उसी में मग्न रहता था कि राजा कितना दयालु है, कितना परोपकारी है। यह तो भगवान है, इसकी हम पूजा करेंगे।

बस, वो दिन-रात उसी गोरखधंधे में लगा रहता था और दूसरा जो माली था, वो ठीक उसके विपरीत था। उसने कहा कि जिस राजा ने हमको यह बगीचा सौंपा है, तो हमारा कर्त्तव्य होता है, हमारा फर्ज होता है कि इसको और सुंदर बनाया जाना चाहिए। जितने पौधे इसमें सड़ गए हैं, गल गए हैं, इनके स्थान पर दूसरे लगाए जाने चाहिए और जब राजा आए और देखे तो उसकी तबीयत खुश हो जाए और यह कहे कि मालियों में यह सबसे होशियार माली है।

बेटे यह संसार क्या है? यह संसार विशुद्ध रूप से बगीचा है, जो भगवान ने हमारे हाथों में

सौंपा है। हमारा और आपका कर्त्तव्य होता है कि इस बगीचे को खूबसूरत बनाएँ। जहाँ कहीं विकृतियाँ हैं, साहस के साथ उनको हटाएँ, लड़ें। कैसे लड़ें? डंडे से लड़ें। नहीं बेटे! डंडे से नहीं लड़ें, सिद्धांतों से लड़ेंगे, वाणी से लड़ेंगे, मधुरता से लड़ेंगे और साहित्य में जो गुरुजी ने आग फूँक दी है, उसको हम जन-जन तक पहुँचाकर ही मानेंगे।

बेटे! उस माली ने यही काम किया, जो मैं दूसरे का उदाहरण दे रही हूँ। उसने कहा कि हमको कार्य सौंपा है, हम मरेंगे, गलेंगे, लेकिन इसी के लिए। साल गए, दो साल गए। राजा का उधर से निकलना हुआ। उन्होंने सोचा कि जरा बगीचा देख करके तो आऊँ कि इन दो मालियों ने क्या किया? बेटे! जब वह घुसा तो सबसे पहले वही भक्त पहुँचा, दूसरा तो पीछे रह गया। उसने लेटकर साष्टांग प्रणाम किया, साष्टांग प्रणाम ही नहीं किया, आँसू बहाना शुरू कर दिया।

उसने कहा कि भक्तवत्सल आप इतने दिनों में आए हैं, मैं तो आपकी पूजा करते-करते थक गया और देखिए यह आपका चित्र रखा है और मैं भी सूख-सूखकर काँटा होता जा रहा हूँ। चूँकि मैं आपकी भक्ति करता रहता था, मैं तो भक्त हूँ। उन्होंने जब निगाह उठाकर देखा तो सारा बगीचा उजड़ा हुआ पड़ा था, तो उसके प्रति उनको इतना गुस्सा आया और वो तिलमिला गए कि मैंने इतना सुंदर बगीचा इस जाहिल के हाथ में सौंपा था। इस जाहिल ने तो चौपट कर दिया।

बेटे! अब वो दूसरे माली के पास पहुँचे। इसने तो जो किया वो तो मैंने देख लिया, पर अब दूसरे माली के पास जाता हूँ। जरा उसको तो देखूँ कि कहीं ऐसा ही वो भक्त भी तो नहीं है। एक तो इनके हाथों में सौंप दिया। बेकार निर्जीवों के हाथ में, मुरदों के हाथ में मैंने सौंप दिया, जिनके अंदर कोई शक्ति नहीं है, जीवन नहीं है। बेटे! जब राजा दूसरी जगह गया तो वो पहचान भी नहीं पाया। राजा को नहीं पहचान पाया।

थोड़ी देर उसने देखा तब उसको समझ में आया कि अरे! यह तो राजा हो सकते हैं। आइए साहब! आइए। तो उन्होंने कहा कि क्यों भाई तुमने क्या किया? उसने कहा कि देखिए! मैंने तो अपने फर्ज और कर्त्तव्य में कोई कमी नहीं छोड़ी है, पर आप इन्क्वायरी करिए। आप देखिए कहीं ऐसा तो नहीं है कि मेरी साधना में कोई कमी तो नहीं रह

विलंब सूचना

(1) डाक विभाग ने रजिस्टर्ड सेवा बंद कर दी है। अतः रजिस्टर्ड पैकिट नहीं भेजे जाएँगे। नई सेवा इतनी महँगी है, जिसे वहन नहीं किया जा सकता।

जिन सदस्यों को अखण्ड ज्योति न मिले, वे तुरंत सूचित करें। दोबारा भेजी जाएगी।

(2) डाकघर में बैग, टैग लेबिल, डाक वाहन (मेल मोटर) एवं स्टाफ की कमी हो जाती है, जिसके कारण विलंब होता है।

अधिकारियों से निरंतर संपर्क किया जा रहा है। आशा है संतोषजनक परिणाम निकलेंगे।

पाठकों को हो रही असुविधा के लिए हमें खेद है।

गई ? कोई कमी रह गई हो तो आप मुझे बताइए, अब की बार मैं अपनी भूल को सुधार लूँगा। जाने और अनजाने में मेरी जो कमी होगी, मेरी जो भूल होगी, अगली बार मैं सुधारकर आपको बता दूँगा। कृपा करके आप यह बताइए कि आपके इस बगीचे में कोई कमी है क्या ? बेटे! जितना बगीचा उसके हाथ में दिया था वो सौ गुना हो करके फल-फूल रहा था।

उन्होंने पूछा कि ये किसके-किसके पेड़ हैं। उसने कहा कि ये आमों के पेड़ हैं। तो तूने चखा कि कौन-सा आम मीठा और कौन-सा आम खट्टा है। उसने कहा कि नहीं, मेरा तो केवल कर्त्तव्य था और फर्ज था वो मैंने निभाया। आपने यह कहा होता कि तू चख ले तो मैं चख लेता। आप देंगे तो मैं खा लूँगा। तूने ऊपर से गिरा तो भी नहीं खाया ? नहीं, मैं दूसरे के हक का क्यों खाऊँगा, मैंने नहीं खाया। इसमें जो कमी हो वो आप बताइए।

संसाररूपी बगीचे को सँभालें

बेटे, मैंने आपको दोनों ही परिभाषाएँ समझा दीं। कौन-सी ? यही कि दोनों ही भक्त थे, लेकिन बेटे कौन-सा भक्त श्रेष्ठ था ? वो जिसने उस बगीचे को सँभाला। कौन-से बगीचे को ? बेटे, संसाररूपी बगीचा, जिसका मैं उदाहरण दे रही हूँ। आपके लिए वह कितना बड़ा उद्यान है, जो गुरुजी ने आपके हाथ में सौंपा है। बेटे! आपको तो पका पकाया मिला है, पकाना पड़ रहा है क्या ? और भक्तों को पकाना पड़ा था, और शिष्यों को पकाना पड़ा था।

रामकृष्ण परमहंस जब चले गए, उसके बाद विवेकानंद कुछ और हो गए और उन्होंने मिशन को सारे संसार में फैलाया। कब ? जब वो मर गए तब। उन्होंने कोई साहित्य लिखा था क्या ? उन्होंने कुछ समाज सेवा की थी क्या ? नहीं बेटे, हमें नहीं मालूम क्या किया था ? हमें तो पीछे का मालूम है, आगे का तो कुछ मालूम नहीं है। आगे का तो यही कि वो केवल भक्ति में रहते थे, शक्ति देते थे, बस, और कुछ काम किया था, नहीं।

बेटे, इन्होंने तो खून और पसीने से सींच करके आपको साहित्य के रूप में कितना विशाल बगीचा आपके हाथ में थमाया है, वो सारी आग उड़ेल दी है और यहाँ प्रशिक्षण से ले करके, बाहर शक्तिपीठों से लेकर कितना स्वरूप उन्होंने खड़ा किया है।

आप नहीं जानते ब्रह्मवर्चस से लेकर के, गायत्री तपोभूमि से लेकर के, शांतिकुंज से लेकर के विशाल बगीचा और किसी ने नहीं खड़ा किया। बेटे! गुरुजी ने किया है।

हर समय वे ज्वाला की तरह से धधकते रहते हैं, तो बेटे! आप उनकी आग में शामिल हुए कि नहीं हुए, मुझे नहीं मालूम, लेकिन बेटे! मैं तो हो गई। मुझे तो ऐसा अनुभव होता है कि वो चिनगारी अब मेरे अंदर भी सुलगने लगी है। क्यों सुलगने लगी है बेटे ?

उसका भी कारण है। इसका कारण वो है, जो वे कहते रहते हैं। क्या कहते रहते हैं ? हम तो गुरुजी आपके लिए समर्पित हैं। हट ऐसे समर्पित होते हैं क्या ? बेटे जो समर्पित होता है, वो चैन से नहीं रहता है। मैं कहना नहीं चाहती, पर मुँह पर बात आ गई है तो मैं कह देती हूँ।

बेटे, आठ जनवरी को जब मैंने खून देखा तो मैंने कसम खा ली। मैंने कहा कि यह कदम आगे को उठेगा, पीछे नहीं हटेगा। हर समय उनके कदम-से-कदम मिलकर के चला है और अब ? अब पूरे उत्साह और साहस के साथ चलेगा। इसे कोई डिगाने वाला इस पृथ्वी पर पैदा नहीं हुआ है और न है और न होगा।

बेटे, मिशन के लिए, गुरुजी के लिए हम आत्मवत् समर्पित हैं और पत्नी होने के नाते भी

समर्पित हैं। हाँ बेटे! गुरुजी के लिए तो मैं समर्पित हूँ, उनके लिए तो मैं नतमस्तक हूँ ही, पर बेटे! उनके क्रियाकलापों के लिए मैं उनसे भी ज्यादा समर्पित हूँ।

मिशन के लिए वचनबद्ध बनें

उन्होंने प्रथम दिन ही मुझसे यह कहा था कि देखो तुम भावुक बहुत हो, जो दृश्य तुमने देखा है, कभी तुमने जाना भी नहीं। मैं जा रही थी तो रास्ते में एक घायल कुत्ता पड़ा था। रिक्शा रुकवा करके एक झोंपड़ी में से पानी लाए थे। मुझे उसे देखकर के चक्कर आ गया था। किसको ? घायल कुत्ते को देख करके।

बेटे! भेड़िया कहूँ या बहेलिया कह सकती हूँ, जिसने मेरे कृष्ण पर आक्रमण किया था और जब मैंने अपनी आँखों से देखा तो मैंने कहा कि मैं आपके लिए और आपके मिशन के लिए वचनबद्ध हूँ। चूँकि मैं इन बच्चों की माँ हूँ।

आप ही नहीं, उसमें मैं भी हिस्सेदार हूँ। आज मैं आपके सामने बैठी हूँ, मैंने जिंदगी में कभी कल्पना भी नहीं की थी कि मुझे कभी अपने बच्चों से कुछ कहना पड़ेगा, सिवाय इसके कि मैंने घर-गृहस्थी की बात पूछने के अलावा कभी दो शब्द भी नहीं कहे। बेटे! यह कौन कहलवा रहा है? बेटे! वो शक्ति कहलवा रही है, कौन-सी ? समर्पण की कहलवा रही है और वही करा रही है।

क्या है समर्पण ?

बेटे, समर्पण किसे कहते हैं? मैंने आपको इसकी थोड़ी-सी झलक दिखाई है और अपने शब्दों में बताया है। मैं इसमें अपना अहंकार नहीं बता रही हूँ। आपसे यह नहीं कहना चाहती कि मेरे अलावा कोई नहीं। बेटे! आप भी हो सकते हैं, क्यों नहीं होंगे ? पर होंगे तब, जब अंतरात्मा से आप पुकारेंगे तब और अपनी क्षुद्रता को छोड़ेंगे तब। फिर आप मालिक हो जाएँगे।

हाँ बेटे। इस संसार के मालिक हो जाएँगे। भक्त जो होता है, वो भगवान की पूँजी का मालिक हो जाता है और भगवान का मालिक हो जाता है, कैसे हो जाता है ? मालिक ऐसे हो जाता है, जब पत्नी ब्याह करके घर में आती है, भगवान न करे दूसरे ही दिन उसका पति चल बसे तो ? तो बेटे जो भी उसकी संपत्ति है, उसकी वह मालिक हो जाती है।

ऐसा क्यों होता है ? अरे बेटे ! इसलिए होता है कि जिस दिन से, जब से उसकी भाँवर पड़ीं और सारा-का-सारा अपना परिवार छोड़कर पति के घर में गई, बेटा! उस दिन से उसने अपना सर्वस्व पति के चरणों पर अर्पण कर दिया। कल जो छोकरी उठाने से भी नहीं उठती थी, माँ जगाती थी तब भी वो जगती नहीं थी, काम नहीं करती थी और हठबाजी करती थी और दूसरे दिन क्या हो गया?

अरे बेटे, कुछ का मारा कुछ हो गया—

नजरें बदलीं तो नजारे बदल गए,
किश्ती ने मोड़ा रुख तो किनारे बदल गए।

उसने पिछले जीवन से मुँह मोड़ लिया न और अगला ज़ीवन शुरू कर दिया। उसने कहा कि पिछला जीवन तो हम छोड़ आए, माँ का घर छोड़ आए और अब आपके पास आ गए। बेटे अब वह अपने दांपत्य जीवन की और पति की संपत्ति की मालिक हो गई। आप किसी के मालिक हो जाएँगे क्या ? आप नहीं हो सकते, लेकिन पत्नी हो जाएगी। क्यों हो जाएगी ? क्योंकि उसने समर्पण किया है, इसलिए हो जाएगी।

भगवान के उत्तराधिकारी कैसे बनें ?

आप भगवान के उत्तराधिकारी बन जाएँगे कि नहीं ? बेटे ! मुझे शक है; क्योंकि आपके अंदर वो चालाकी भरी हुई है, जो भगवान के भक्त के अंदर नहीं होनी चाहिए। कौन-कौन-सी चालाकी ? पाँच पैसे की माला से भगवान बिलकुल खुश हो जाएँगे

और जो माँगेंगे सो दे जाएँगे। पाँच पैसे में पाँच वरदान तो ले ही लेंगे। इससे कम तो लेकर ही नहीं हटेंगे।

बेटे से लेकर बेटी तक के विवाह से लेकर मुकदमे तक पाँच वरदान से कम नहीं लेंगे। बेटे, यह जो चालाकी हमारे अंदर भरी हुई है, हमको भक्त कहलाने लायक छोड़ेगी क्या? हम भक्त नहीं कहला सकते हैं।

भक्त हैं नहीं तो कहलाएँगे कैसे? फिर हमारी जीवात्मा अपने को जानेगी कैसे? अपने गले में मुँह डालकर देखें कि आखिर हम हैं क्या? जब तक हम अपने को समर्पित नहीं कर पाएँगे, तब तक भगवान हमारे पास आएगा कैसे? और भगवान नहीं आएगा तो उसकी संपत्ति के मालिक कैसे हो जाएँगे?

फिर आप नहीं हो सकते, बिलकुल नहीं हो सकते हैं। बेटे, वेश्या और पत्नी में फरक होता है। वेश्या मनोरंजन कर सकती है, अधिकारिणी नहीं हो सकती है और जो पत्नी है, पूरी-की-पूरी अधिकारिणी होती है।

अपना स्वरूप समझिए

इसलिए आपसे मेरा निवेदन यही था कि बेटे! अपने स्वरूप को समझिए और स्वरूप को समझ करके आप उस शक्ति को पैदा करिए। आराधना करिए। आराधना कौन-सी? बेटे, भगवान का काम करना। भगवान का प्यार कब मिलेगा? बेटे! भगवान का काम करेंगे, तब भगवान का प्यार मिलेगा।

भगवान का प्यार पाने के लिए भगवान का काम भी करना पड़ता है? हाँ बेटे, मैंने बताया था न कि नाम से ज्यादा भगवान का काम करना होता है। भक्त को कैसा करना पड़ता है? जैसा कि बेटे ग्वाल-बालों ने किया था। कृष्ण गोवर्धन पर्वत को उठा रहे थे। उन्होंने कहा कि हमारे भगवान पर्वत उठा रहे हैं और हम ऐसे ही देखते रहेंगे? नहीं, ऐसे नहीं देख सकते, हम लाठी लगाकर उठाएँगे।

उनकी लाठी से पर्वत उठा कि नहीं उठा, लेकिन भगवान का काम करने में सहायक तो हो ही गए थे। श्रेय जो उनको लेना था। उनकी भावनाओं ने कहा कि हम भगवान के साथ-साथ चलते हैं। हम भगवान के आगे-आगे चलेंगे और हम कहेंगे कि भगवान हम आपके हैं। आपके कार्य के लिए आपका गोवर्धन पर्वत हम उठाएँगे और बेटे उठाया, उन्होंने लाठी लगाई।

बेटे, भक्तों का और उदाहरण बताऊँ। शंकराचार्य थे और जब शंकराचार्य के अंदर भगवान आया तो बेटे उन्होंने अलख जगाया। सारे संसार में घूमे और कहते हैं उनको सोलह वर्ष की आयु में भगंदर का फोड़ा हो गया था और बत्तीस साल की उम्र में उनका देहावसान हो गया। बेटे, भगंदर का फोड़ा लिए-लिए वे फिरे। कौन करा रहा था? उनकी शक्ति?

बेटे, उनका भगवान, उनकी रुहानियत करा रही थी। हम और आप होते तो बस, अब मरे, तब मरे करते रहते। अरे! मौत जब आएगी तब आएगी, तू तो उससे पहले ही मर रहा है। मौत आएगी छह महीने पीछे और तू आज ही मर रहा है। तेरे दिमाग पर वो बीमारी हावी है। न तो तू आज मरेगा और न ही कल मरेगा, लेकिन मरेगा जरूर। निश्चित मरेगा देख लेना। क्यों मरेगा? क्योंकि सारे दिन बीमारी जो हावी है।

बेटे! जब काम होता है तब बीमारी एक तरफ रखी रहती है। बीमारी क्या करेगी? और देखो उनकी माँ भी बाधक थीं, जैसे संभव है कि आपकी माँ भी हो, आपकी बीबी बाधक हो सकती है, पर सबसे ज्यादा आप बाधक हो सकते हैं। बीबी आपकी नहीं हो सकती, माँ-बाप भी

नहीं हो सकते, अपनी संकीर्णता ही मनुष्य की बाधक होती है, जो हमें आगे चलने से रोकती है। कौन रोकता है?

माँ ने कहा कि मैं तो अपने बेटे की शादी करूँगी। उन्होंने कहा कि ये क्या कह दिया। ये तो मुझे जंजाल में फँसाए दे रही है। मुझे तो भगवान का काम करना था।

भगवान के काम में हाथ बँटाना था। भगवान ने हमको पैदा किया है, इतना बढ़िया हमको शरीर दिया है। हमको जो लाखों-करोड़ों रुपये का शरीर मिला है, तो कुछ करने के लिए मिला है कि जंजाल में फँसने के लिए मिला है। उनने कहा कि माँ मैं शादी नहीं करूँगा, तो माँ नहीं मानी। हाँ बेटे, मैं कैसे मान सकती हूँ? मेरे घर बहू आनी चाहिए? बहू आएगी, बाल-बच्चे भी होंगे।

तो उन्हें कल्पना आई कि यह नरक कहाँ से आ गया? मेरे पास नरक न आए, इसलिए चलो गंगा जी नहाकर आते हैं। गंगा जी नहाने गए तो उन्होंने जरा बहाना बनाया। जैसा कि गुरुजी ने भी एक बार अपनी माँ को चकमा दिया था, सुनामी जैसा चकमा दिया था। तो शंकराचार्य ने जा करके गंगा जी में पैर नीचे धँसा दिया।

उन्होंने कहा कि माँ मगर ने मेरा पैर पकड़ लिया है, अब मेरा बचना मुश्किल है। माँ रोने-चिल्लाने लगी। अब वो खींचें, माँ खींचें, बेटा खिंचाए नहीं; क्योंकि मगर ने थोड़े ही पकड़ा था। वो तो माँ से पल्ला छुड़ाना चाहता था।

उन्होंने कहा कि माँ! मगर नहीं छोड़ता। उसने कहा कि बेटे! मैं क्या करूँ? तेरे लिए मैं सर्वस्व दाँव पर लगा सकती हूँ। जो तू कहेगा बेटे, सो ही करने के लिए तैयार हूँ। उन्होंने कहा कि माँ! शंकर जी कह रहे हैं।

क्या कह रहे हैं? कह रहे हैं कि शादी नहीं करेगा और मेरा काम करेगा तो मैं छोड़ दूँगा। ठीक है बेटे, मैं नहीं कहूँगी और झट माँ का कहना हुआ, चट से वो आ खड़े हुए।

बेटे! ये प्रलोभन हमको गिराते हैं। प्रलोभन को अगर हम लात मार देते हैं तो फिर कोई भी पास नहीं फटकते। फिर हमारी दिशा बिलकुल साफ हो जाती है।

क्रमशः [अगले अंक में समापन]

भगवान श्रीकृष्ण पांडवों के दूत बनकर दुर्योधन से मिलने पहुँचे। उद्देश्य उसे समझाने का था, ताकि महाभारत को टाला जा सके। दुर्योधन ने उनकी शर्त नहीं मानी। उसके उपरांत उसने भगवान श्रीकृष्ण के लिए राजसी भोज इत्यादि प्रस्तुत किए तो भगवान ने उन्हें ठुकराकर विदुर का साधारण भोजन लेना पसंद किया।

दुर्योधन ने इसका कारण पूछा तो भगवान बोले—"सम्प्रीति भोज्यान्यन्नानि आपद्भोज्यानि वा पुनः। भोजन दो कारणों से दिया जाता है। किसी के प्रति दया वश या प्रेम वश। मैं दीन नहीं हूँ, इसलिए तुम्हारी दया की मुझे आवश्यकता नहीं। तुम्हारी मेरे प्रति प्रीति भी नहीं है, इसलिए जिसकी मेरे प्रति प्रीति है, उसका साधारण भोजन भी मेरे लिए अमृत के समान है।"

स्वस्थ तन-स्वच्छ मन-सुखी समाज

स्वस्थ तन-स्वच्छ मन- सुखी समाज सुखमय जीवन का आधार है। मानव जीवन में जब-जहाँ खुशियाँ आएँगी, दुःखों के दुर्दिन दूर होंगे—जीवन सत्य यही होगा। यही समस्त सुखों का सूत्र है, भविष्य की उज्ज्वल भवितव्यता की आधारशिला है। इसका संबंध जीवनशैली से है, जीवनशैली में सत्त्व की प्रधानता से है। जहाँ सत्त्व है, वहाँ अपने आप ही सुखों की बहुलता और बहुतायत हो जाती है। इनकी स्थिरता और स्थायित्व होता है।

जीवनशैली के दायरे में जीवन के कुछ आयाम नहीं, बल्कि सब कुछ समाया होता है। इसका प्रत्येक पहलू-प्रत्येक आयाम इसमें समाहित-समाविष्ट होता है। बीते युगों में जब कभी, जहाँ भी देश अथवा धरती में सुखमय जीवन की स्थिति बनी है—सूत्र यही रहा है। इसी अवस्था को सतयुग का समुज्ज्वल जीवन कहा गया है।

खान-पान, सोच-विचार, रहन-सहन सब मिलाकर जीवनशैली की संरचना स्पष्ट होती है। इसी को चरित्र-चिंतन व व्यवहार कहकर प्रकट किया गया है। जीवनशैली को सँवारना जीवन की समझ से बन पड़ता है। जीवनशैली ही जीवन जीने की कला और कुशलता है। जीवन में सुगंध व सौंदर्य इसी से संभव होता है। इसमें आई विकृति, जीवन को विकृत कर देती है। इसकी कमियों से जीवन कमतर हो जाता है।

वर्तमान में यही हो रहा है। दुर्गुणों की दुर्गंध से दुःख उत्पन्न हो रहे हैं। जीवन की सही समझ कहीं खो गई है। जीवन जीना लोग भूल गए हैं। इसीलिए जीवन दुःखों से भर गया है। तन रोगी हुआ है, मन में विषाद व विकलता बढ़ी है। समाज में टूटन और दरारें बढ़ी हैं। स्वाभाविक भी है—दुःखी व्यक्ति भला सुखी समाज का निर्माण कैसे कर सकता है ? वर्तमान की उलटी स्थिति में स्वस्थ तन, स्वच्छ मन व सुखी समाज की संभावना के कोई आसार नहीं हैं।

ये आसार तो तब बनेंगे, जब उलटी स्थिति फिर से उलटकर सीधी हो जाए। सुखमय जीवन के लिए यही उचित और आवश्यक हो गया है। दुःखों को सुखों में बदलने के लिए अंधकार को प्रकाश में परिवर्तित करना होगा। असुरता को देवत्व में, विष को अमृत में बदलने से ही इस संभावना को साकार करना संभव है। आज जो कुछ भी है, वह किसी एक व्यक्ति, एक क्षेत्र अथवा एक देश की समस्या नहीं है, समस्या का स्वरूप व्यापक और विश्वव्यापी है।

ऐसे में समाधान भी व्यापक और विश्वव्यापी तलाशने होंगे। अँधेरा यदि घर की किसी कोठरी या कमरे में हो, तो एक या दो दीये से उस पर काबू पाया जा सकता है। वहाँ किसी एलईडी बल्ब को चमकाकर रोशनी की जा सकती है, लेकिन जब अँधियारा धरती भर में फैला हो, तो फिर किसी दीये या बल्ब की रोशनी कारगर नहीं रह जाती। इसके लिए सूर्योदय ही समाधान बनता है।

अब तक जिस सूर्योदय की प्रतीक्षा रही है, आने वाले वर्षों में यही संभव होने जा रहा है। दीये या बल्बों की रोशनी जैसे-तैसे घरों या नगरों के थोड़े या ज्यादा हिस्से में आंशिक उजाले को संभव बनाती है, लेकिन इससे जंगल, पहाड़, नदियाँ

अथवा धरती के कोने-कोने में उजाला नहीं भरा जा सकता। यह प्रयास तो सूर्योदय के प्रकाश में ही सफल होता है। अब यही होने जा रहा है। समय रहते हम सबको भी अपनी नींद से जागकर जागरूक हो जाना चाहिए। नए ढंग से, नए तरीके से जीवन को समझने की शुरुआत करनी चाहिए। स्थितियाँ भी शुरुआत से शुरू करने की माँग कर रही हैं।

बात बहुत सामान्य समझ की है, यदि आग घर में लगी हो, तो उसकी उपेक्षा करके हम स्वयं को कैसे बचा सकते हैं और यदि आग सारे गाँव में लग गई हो, तो उसकी उपेक्षा करके बस, घर की रक्षा करने का विचार व्यर्थ सिद्ध होता है। इसी तरह से यदि देश व धरती का अस्तित्व संकट में पड़ गया हो, तो अपने-अपने का राग अलापना निरी मूर्खता के सिवाय और कुछ नहीं है।

विचार करें, तो सच समझ में आ जाएगा। हमारी अपनी सुविधाएँ हमारे अपने घर में होती हैं। घर की सुविधाओं के स्रोत गाँव या शहर से जुड़े होते हैं। शहर की सुविधाओं के स्रोत हमारे क्षेत्र व प्रांत से जुड़े होते हैं। इसी तरह से प्रांत की समस्त सुविधाएँ देश से और देश की सुविधाएँ दुनिया से जुड़ी रहती हैं। जबकि दुनिया में मनुष्य व अन्य जीवों-वनस्पतियों का जीवन धरती पर टिका है और स्वयं सारी धरती प्रकृति से प्राण पाती है।

सामान्य समझ की यह बात हम सबको न तो व्यक्तिगत रूप से समझ में आई और न सामूहिक रूप से। तभी तो प्राणदायिनी प्रकृति को हम प्राणविहीन करने में जुटे हैं, जीवनदायिनी धरती का जीवन समाप्त करने में जुटे हैं। जल व वायु में विष घोलकर भला हम स्वस्थ कैसे रह सकते हैं? स्वस्थ तन के लिए अन्न-सब्जियाँ व फल भी तो विषमुक्त होने चाहिए। जब तक धरती और प्रकृति के साथ का साहचर्य नहीं सीखा जाता, तब तक यह संभव नहीं है। स्वस्थ तन के लिए प्रकृति का साथ देना और प्रकृति का साथ पाना, दोनों जरूरी हैं। स्वयं को और अपने आस-पास का सोना-जागना देख लें, तो सच का पता चल जाएगा। विचित्र विडंबना यह है कि रात को जागना-दिन में सोना हमारी आदत बन गई है।

हमारी अपनी घड़ी अथवा घर की घड़ियाँ हमें समय की सूचना देती हैं। अपने आलस्य-प्रमाद की रक्षा के लिए हम इनकी सुइयों में जब-तब हेर-फेर कर लेते हैं, लेकिन धरती की घड़ी की सुइयाँ तो सूरज-चाँद और सितारे हैं। इनमें

हमारी अपनी सुविधाएँ हमारे अपने घर में होती हैं। घर की सुविधाओं के स्रोत गाँव या शहर से जुड़े होते हैं। शहर की सुविधाओं के स्रोत हमारे क्षेत्र व प्रांत से जुड़े होते हैं। इसी तरह से प्रांत की समस्त सुविधाएँ देश से और देश की सुविधाएँ दुनिया से जुड़ी रहती हैं। जबकि दुनिया में मनुष्य व अन्य जीवों-वनस्पतियों का जीवन धरती पर टिका है और स्वयं सारी धरती प्रकृति से प्राण पाती है।

हेर-फेर तो हमारे द्वारा संभव नहीं है। धरती के जीवन की विशेषताएँ-सूक्ष्मताएँ तो इन्हीं के द्वारा परिचालित होती हैं।

स्वस्थ तन के लिए हमें इनके अनुरूप दिनचर्या-ऋतुचर्या का ध्यान रखना पड़ेगा। सोना-जागना, खाना-पीना व्यवस्थित करना पड़ेगा। ब्राह्ममुहूर्त, अमृत-वेला शब्द हमें परमब्रह्म परमात्मा की कृपा-वर्षा और अमृत-वेला में अमृतवर्षण की

सूचना देते हैं। जिसे इस समय जागकर ही पाया जा सकता है।

यही स्थिति रहन-सहन व सोच-विचार की है। मन में संकीर्णता, क्षुद्रता, विद्वेष का विष लेकर कोई शांत और सुखी नहीं रह सकता। ठीक खान-पान की तरह अपना रहन-सहन व सोच-विचार सही करने की जरूरत है। रहन-सहन में जब उदारता व सहनशीलता विकसित होगी, सोच-विचार से जब संकीर्णता व क्षुद्रता से उपजे मत और आग्रह विदा होंगे; तभी हमारे मन व जीवन में शांति व सुख का आगमन संभव है।

'चिंतन सुधरे तो जीवन सँवरे'—यह सूत्र भुलाए जाने के लिए नहीं, बल्कि अपनाए जाने के लिए है। स्वच्छ मन का आधार यही है। अपने मन की मलिनता से, हम सबने न जाने कितने मनोरोग पाल लिए हैं। इनको हटाने के लिए, ठीक करने के लिए सही चिकित्सा विधि-स्वच्छ मन है।

नकारात्मकता के विषबीज मनोभूमि में जब बोए जाएँगे, तो फसल भी इन्हीं की उगेगी। सम्मान देकर ही सम्मान मिलता है। यदि हम औरों के माता-पिता का आदर करेंगे, तो वे हमारे माता-पिता का आदर करेंगे। दूसरों के पुरखों-पूर्वजों का सम्मान हमारे पुरखों-पूर्वजों को सम्मान दिलाता है।

इसी तरह अन्य सभी धर्मों के प्रति सम्मानित भाव हमारे धर्म को सम्मानित करता है। राम-कृष्ण हों या ईसा-मूसा, मुहम्मद-बुद्ध हों या नानक-महावीर, सभी देवमानव थे। सबने अपने-अपने समय में महान कार्य किए, महान बनने का शिक्षण दिया। इनमें से हरेक पूजनीय है। इनके प्रति श्रद्धा व सम्मान से हम भी श्रेष्ठता की ओर अग्रसर होंगे। महामानव कोई भी हों, धार्मिक-आध्यात्मिक जगत् के हों, अथवा समाज सुधारक अथवा स्वाधीनता सेनानी, महान सभी हैं। इनके प्रति सत्कार भाव से हम स्वयं सत्कारित होते हैं। छोटे मन से कोई बड़ा नहीं होता, मन में विष लेकर कोई अमृत का भागी नहीं होता।

स्वस्थ तन हो, स्वच्छ मन हो, तो समाज स्वयं सुखी हो जाता है। इसके लिए अलग से प्रयास नहीं करने पड़ते। हम जीवन जीना भुला बैठे हैं, इसे फिर से याद करना होगा। विस्मरण को स्मरण में बदलना होगा। जीवन जीने की कला और कुशलता में ही जीवन का सुगंध और सौंदर्य है।

जीवन की सही समझ हमारे जीवन को खुशियों से भर देती है। जो जीना सीख जाते हैं, वे परिवार को

स्थिति को बदलने के लिए हमें स्वस्थ तन, स्वच्छ मन एवं सुखी समाज की वर्णमाला सीखनी होगी। हमें समझना होगा कि सुख देकर ही सुख मिलता है। प्यार देकर ही प्यार पाया जाता है। सम्मान देने पर ही सम्मान मिल पाता है।

भी प्रसन्न रखने में समर्थ होते हैं और तब ये प्रसन्न परिवार मिलकर समाज को सुखी बनाने में समर्थ होते हैं। परिवार के झगड़े व परिवारजनों की झगड़ालू वृत्ति ही समाज में नए-नए झगड़ों को जन्म देती है। इस स्थिति को बदलने के लिए हमें स्वस्थ तन, स्वच्छ मन एवं सुखी समाज की वर्णमाला सीखनी होगी। हमें समझना होगा कि सुख देकर ही सुख मिलता है। प्यार देकर ही प्यार पाया जाता है। सम्मान देने पर ही सम्मान मिल पाता है।

इसी की सीख और शिक्षा, धर्म के जीवन-बोध में है। ❑

विचारक्रांति-अभियान की जन्म जयंती

वसंत पंचमी गायत्री परिवार की, युग निर्माण मिशन की, विचारक्रांति-अभियान की जन्म जयंती है। जिन नैष्ठिक परिजनों की भावना, गहराई से व घनिष्ठता से इस मिशन के लक्ष्य, गतिविधियों व प्रवृत्तियों से जुड़ी है, उनके लिए वसंत का पर्व नूतन उल्लास का पर्व है; क्योंकि वे इस पर्व की गरिमा को, गंभीरता को समझते हैं।

सामान्य क्रम में वसंत का पर्व, विद्या की देवी माँ सरस्वती के प्राकट्य का पर्व है सो विद्यालयों से लेकर जनागम के सभी स्थलों में उसी क्रम में, विशिष्ट आयोजनों की परंपरा रही है।

प्राकृतिक परिवर्तन की दृष्टि से यह समय— उत्सवी माहौल का भी है और पेड़-पौधों से लेकर, वन्यप्राणी—सभी वसंत के आगमन का उत्सव, अपनी-अपनी दृष्टि से, अपनी आंतरिक प्रफुल्लता को अभिव्यक्त करके मनाते हैं, परंतु युग निर्माण मिशन के कार्यकर्त्ताओं के लिए वसंत पर्व एक दूसरा ही संदेश, कुछ नई योजनाएँ लेकर के आता है, जिनके मूल में उत्सवी रंग होते हुए भी, उनका उद्देश्य सृष्टि में व्यापक स्तर पर परिवर्तन लाना होता है।

अपना इतिहास देखें तो मिशन के सभी महत्त्वपूर्ण कार्य इसी तिथि को संपन्न हुए हैं। वसंत पंचमी 1926 के दिन, पूज्य गुरुदेव को अपनी मार्गदर्शक सत्ता से भेंट का अवसर मिला और साथ ही उसी दिन उनके 24 गायत्री महापुरश्चरणों की दुर्द्धर्ष तप-साधना का क्रम प्रारंभ हुआ। हम सब को अपने सूक्ष्म आलोक से प्रकाशित करता अखंड दीपक इसी वसंत पर्व को अहर्निश जलना आरंभ हुआ तो गायत्री तपोभूमि का शिलान्यास, अखण्ड ज्योति पत्रिका व युग निर्माण योजना पत्रिका का प्रकाश भी इसी दिन आरंभ हुआ।

पूज्य गुरुदेव ने आर्ष साहित्य का लेखन भी इसी दिन आरंभ किया व शांतिकुंज जाग्रत तीर्थ का भूमिपूजन भी इसी शुभ दिन हुआ। यही वो शुभ दिन है, जिसे हम अपने आराध्य गुरुसत्ता के आध्यात्मिक जन्म दिवस के रूप में मनाते रहे हैं तो यही वो दिन भी है, जिस दिन पूज्यवर ने अपनी लौकिक सत्ता को समेटने के व युग परिवर्तन के भविष्यगत घटनाक्रमों के संकेत, वर्ष 1990 में देने प्रारंभ किए थे।

इन सब घटनाक्रमों का उल्लेख करने के पीछे उद्देश्य, मिशन का इतिहास दोहराना नहीं, वरन अखण्ड ज्योति पाठ्यवृंद को यह याद दिलाना है कि जितने उमंग, उत्साह, उल्लास व भावनात्मक समर्पण के साथ गायत्री परिजन वसंत पंचमी को मनाते हैं, उतने उल्लेखनीय तरीके से शायद ही कोई संगठन वसंत पर्व का स्वागत करता है।

सामान्य रूप से वसंत पर्व मनाने हेतु जप, हवन, प्रभातफेरी, दीपयज्ञ इत्यादि की परंपरा रही है। इन्हीं आयोजनों के मध्य विगत वर्ष की प्रगति यात्रा को साझा करने की व आगामी वर्ष की योजनाओं को प्रस्तुत करने की पुनीत परंपरा रही है, जिसकी जितनी प्रशंसा की जाए कमतर ही रहेगी।

यदि उत्साह में आकर कोई आयोजन एक दिन किया जाए व दूसरे दिन उसे भुला दिया जाए तो उसे बालसुलभ चपलता ही माना जाए। गंभीर चिंतन के

साथ संपन्न की गई कोई प्रक्रिया नहीं। इसीलिए अपने परिवार के स्वजन इस शुभ अवसर पर गत पर चिंतन-मनन व आगत पर विहंगावलोकन करने का महत्त्वपूर्ण कार्य करते रहे हैं।

इसके अतिरिक्त अपने परिजन इस दिन को गुरुवर के लिए श्रद्धांजलि के रूप में भी मनाते रहे हैं, जिसकी सार्थक परिणति अखण्ड ज्योति पत्रिका की सदस्यता बढ़ाने के रूप में मिलती रही है। इस वर्ष भी यह उत्साह मंद नहीं पड़ना चाहिए, निरंतर आगे बढ़ना चाहिए। ❑

एक पंडित राज्य के राजा को नियमित भागवत सुनाने जाया करता था। वह उन्हें रोज भागवत सुनाकर कहता—"राजा! अब आप समझे—प्रभु की लीला।" उत्तर में राजा भी पंडित को कहते—"पंडित जी! पहले आप समझो।"

पंडित जी रोज ये ही सोचते हुए घर जाते कि आखिर राजा ऐसा उत्तर क्यों देता है? पंडित जी की बड़ी गृहस्थी थी और वे अपने पत्नी-बच्चों, घर-परिवार, नाती-पोतों के विषय में सोचकर परेशान रहते थे।

एक दिन उन्होंने घर लौटकर अपने मित्र को राजा से नियमित होने वाले वार्तालाप के विषय में कहा तो मित्र ने पूछा—"यह बताओ कि भागवत का मूल संदेश क्या है?"

पंडित जी बोले—"वैराग्य और ईश्वरभक्ति।" मित्र बोले—"अब समझे कि राजा के कहने का क्या अभिप्राय है।" यह सुनते ही पंडित जी की अंतरात्मा जाग उठी और वे संन्यास की राह पर निकल पड़े। उन्हें भान हो गया कि दूसरे को उपदेश देने से क्या लाभ, जब यह संदेश स्वयं के जीवन में ही नहीं उतरा।

जाते-जाते वे अपने मित्र से बोले कि राजा से कहना—"अब पंडित जी भागवत सुनाने नहीं आएँगे, वे समझ गए हैं।" जब तक स्वयं के आचरण में शिक्षाएँ न उतरें, तब तक दूसरे को सीख देना व्यर्थ है।

जन्म शताब्दी वर्ष पर, ऋषियुग्म के अनुदान से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

अखण्ड दीप व माताजी के, जन्म के शत वर्ष होंगे।
अन्याय अत्याचार के प्रति, अनवरत संघर्ष होंगे॥
धर्म होगा प्रतिष्ठित, सत्संकल्प के अनुष्ठान से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

स्थूल काया त्याग सद्गुरु, दीप में ही समा गए।
ज्ञान क्रांति की मशाल, शिष्यों के करों में थमा गए॥
मशाल बनी प्रचंड ज्वाला, संगठित समयदान से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

हृदय सद्गुरु का ही जिसके, अंतस् में है धड़क रहा।
रक्त उनका ही कि जिसकी, शिराओं में है फड़क रहा॥
शिष्य व गुरु कार्य में हो, निरत तन-मन-प्राण से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

यज्ञ सत्कर्मों का प्रेरक, ज्ञान है सत्संग से।
गायत्री भूसुर बनाती, अंतरंग बहिरंग से॥
सद्गुरु करते प्रकाशित, शिष्य को तप प्राण से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

मानवता के सौभाग्य का, अब तो उदित दिनमान होगा।
साधना पाई विरासत में, प्रखर अभियान होगा॥
दुर्बुद्धि होगी तिरोहित, सद्बुद्धि के संधान से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

पात्रता हो सुविकसित, घर-घर विवेकानंद जागे।
विश्वगुरु भारत रहे, अंतस् में आत्मानंद जागे॥
आज विस्मित विश्वमानव, सद्गुणों की खान से।
विश्व झंकृत हो उठा अब, दिव्यतम अभियान से॥

—चक्रेश पाण्डेय

युगव्यास वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य

के

समग्र वाङ्मय का क्रमिक परिचय

खंड-13

गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ

गायत्री के पंचमुखी एवं दस भुजाधारी होने का वर्णन अनेक स्थानों पर आता है । वस्तुतः यह सत्य है । पंचकोश आत्मसत्ता के पाँच खजाने के समान हैं। इन्हें जानने के लिए पढ़ें-

- गायत्री साधना के स्तर ।
- गायत्री के पाँच दिव्य कोश।
- पंचकोशी साधना का उद्देश्य।
- पंचकोशी साधना में ध्यान-धारणा ।
- गायत्री का तंत्रोक्त वाममार्ग ।
- गायत्री द्वारा वातावरण-परिष्कार ।
- गायत्री द्वारा तत्त्व-साधना ।

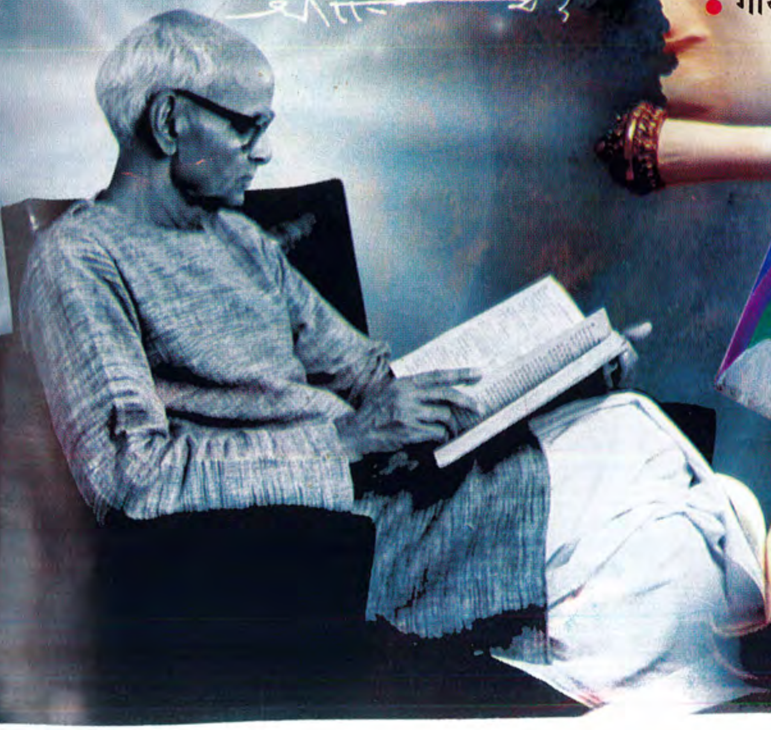

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01-12- 2025
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

प्रांतीय युवा चिंतन शिविर (भोपाल) मध्य प्रदेश

अखण्ड दीप एवं वंदनीया माताजी जन्म शताब्दी समारोह के प्रयाज क्रम में
गायत्री परिवार से संबद्ध युवाओं में दायित्व बोध का जागरण

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक—डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 **मोबाइल** — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल—akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org